Con. 3. VII. 27. 48
350

अंक 7
संख्या 27

मंगलवार,
28 दिसम्बर
सन् 1948 ई.

भारतीय विधान-परिषद्
के
वाद-विवाद
की
सरकारी रिपोर्ट

(हिन्दी संस्करण)

विषय-सूची

	पृष्ठ
विधान का मसौदा-(जारी) [अनुच्छेद 50, 51, नवीन अनुच्छेद 51-क, अनुच्छेद 52, 53, 54 तथा 55 पर विचार]	1789-1869

भारतीय विधान-परिषद्

मंगलवार, 28 दिसम्बर, सन् 1948 ई.

भारतीय विधान-परिषद् कान्स्टीट्यूशन हाल, नई दिल्ली में 10 बजे प्रातः उपाध्यक्ष (डॉ. एच.सी. मुकर्जी) के सभापतित्व में समवेत् हुई।

विधान का मसौदा–(जारी)

अनुच्छेद 50

***उपाध्यक्ष** (डॉ. एच.सी. मुकर्जी): विधान के मसौदे पर हम पुनः वादानुवाद प्रारम्भ कर सकते हैं। सभा के सामने प्रस्ताव यह है:

"कि अनुच्छेद 50 को विधान का अंग माना जाये।"

***श्री गोपीकृष्ण विजयवर्गीय** [संयुक्त-राज्य इन्दौर-ग्वालियर-मालवा (मध्य भारत)]: क्या हम लोग यह जान सकते हैं कि सभा की बैठक किस तारीख तक जारी रहेगी? अगर यह तय किया जा सके तो हमें इसकी सूचना मिल जानी चाहिये ताकि हम लोग तदनुसार अपना कार्यक्रम बनावें।

***उपाध्यक्षः** आगे चलकर किसी दिन–इस सप्ताह के समाप्त होते-होते या दूसरे सप्ताह के प्रारम्भ में—मैं इस स्थिति में होऊंगा कि माननीय सदस्य को यह जानकारी दे सकूं।

(संशोधन नं० 1150 नहीं पेश किया गया।)

संशोधनों को देखने पर मुझे यह पता चलता है कि संशोधन नं० 1151 का प्रथमांश तथा संशोधन नं० 1152—ये दोनों—एक ही आशय के हैं। संशोधन नं० 1152 मि. करीमुद्दीन के नाम में है और वह इसे पेश कर सकते हैं।

---

*इस चिह्न का अर्थ है कि यह अंग्रेजी वक्तृता का हिन्दी रूपान्तर है।

***काजी सैयद करीमुद्दीन** (मध्यप्रान्त और बरार : मुस्लिम): उपाध्यक्ष महोदय, मैं यह प्रस्ताव रखता हूं कि:

> "कि अनुच्छेद 50 के खण्ड (1) में 'for violation of the Constitution' (संविधान के अतिक्रमण के लिये) शब्दों के बाद 'treason, bribery or other high crimes and misdemeanours' (राजद्रोह, घूस या अन्य गम्भीर अपराधों और दुराचारों के लिये) शब्द रखे जायें।"

इस संशोधन के लिये कोई विस्तृत वक्तृता आवश्यक नहीं है। अनुच्छेद 50 में कहा गया है कि संविधान के अतिक्रमण के लिये प्रधान पर प्राभियोग लगाया जा सकता है। इस सम्बन्ध में, अमेरिकन विधान में वह बातें भी रखी गई हैं जिनका सुझाव मैंने इस संशोधन में दिया है। मेरी राय में यह बहुत जरूरी है कि प्रधान पर प्राभियोग लगाने के लिये इन कारणों को भी अनुच्छेद 50 में लिपिबद्ध कर दिया जाये।

***उपाध्यक्षः** क्या प्रो. के.टी. शाह यह चाहते हैं कि उनके संशोधन नं० 1151 के प्रथमांश पर राय ली जाये?

***प्रोफेसर के.टी. शाह** (बिहार : जनरल): मैं इसे उपस्थित करना चाहता हूं।

***उपाध्यक्षः** यह पेश नहीं किया जा सकता। हां, मैं इस पर मत ले सकता हूं।

***प्रोफेसर के.टी. शाहः** ठीक है।

***उपाध्यक्षः** अपने संशोधन नं० 1151 के दूसरे अंश को प्रो. शाह पेश कर सकते हैं।

***प्रोफेसर के.टी. शाहः** मैं यह प्रस्ताव रखता हूं कि:

> "अनुच्छेद 50 के खण्ड (1) में 'either House' (कोई एक आगार) शब्दों के स्थान पर 'the People's House' (लोक सभा) शब्द रखे जायें।"

यही तो वह अंश है, श्रीमान् जिसे पेश करने की मुझे अनुमति मिली है?

***उपाध्यक्षः** हां।

***प्रोफेसर के.टी. शाहः** प्रथा तो सर्वत्र यही है कि प्रधान पर प्राभियोग लोक-सभा ही लगाती है न कि राज्य-परिषद्। अपने संशोधन के जरिये मैं यह चाहता हूं कि हमारे यहां भी यही प्रथा बरती जाय। राज्य-परिषद् (Council of States) के सदस्य सीधे जनता द्वारा निर्वाचित न होंगे। उस सभा में तो, हो सकता है कि कुछ सदस्य मनोनीत भी हों। उस सभा में विशेषत: प्रादेशिक घटकों के तथा विभिन्न हितों के प्रतिनिधान करने वाले सदस्य ही होंगे और उसमें जनता के प्रतिनिधि न होंगे।

यहां उन अपराधों का उल्लेख किया गया है जिनके लिये प्रधान पर प्राभियोग लगाया जा सकता है और मेरी राय में यह प्राभियोग केवल लोक-सभा द्वारा ही लगाया जा सकता है। इस मसौदे में जो विधान-सम्बन्धी योजना है उसके अनुसार वास्तविक सत्ता तो जनता को ही प्राप्त है। इस योजना के अनुसार जनता को ही, जिसमें कि वास्तविक सत्ता सन्निहित है, यह अधिकार होना चाहिए कि वही राज्य के प्रमुख पर लगाये गये ऐसे अभियोगों की सुनवाई, अपने प्रतिनिधियों के द्वारा करे।

मैं समझता हूं कि इस सम्बन्ध में मुझे और तर्क रखने की जरूरत नहीं है। जो लोग दूसरों की नकल करने का शौक रखते हैं और यहां यह कहा करते हैं कि अमुक संशोधन तो उसी पद्धति का समर्थन करता है, जो आज अमेरिका में या पश्चिम के देशों में चालू है, उनको समझाने के लिए भी मैंने जो कुछ कहा है वह यथेष्ट है। जो भी हो, इस संशोधन का विरोध अब इस आधार पर तो नहीं किया जा सकता कि पश्चिम में ऐसा नहीं होता है।

***उपाध्यक्षः** इस संशोधन के बारे में कई संशोधन आये हैं। पहला तो है, संशोधन नं० 30 जो पंचम सप्ताह की पहली सूची में है। कि इसके प्रस्तावक (पं. ठाकुर दास भार्गव) अनुपस्थित हैं, यह पेश नहीं हो रहा है। बाद के दो

[उपाध्यक्ष]

संशोधन यानी नं० 31 और 32 के संशोधन भी उन्हीं के नाम में हैं। वह भी पेश नहीं हो रहे हैं क्योंकि प्रस्तावक महोदय अनुपस्थित हैं।

(संशोधन नं० 1153 नहीं पेश किया गया।)

संशोधन नं० 1154 तथा 1155 को पेश करने की अनुमति नहीं दी जाती है, क्योंकि ये केवल शाब्दिक हैं।

संशोधन नं० 1156, 1160 और 1165 एक ही आशय के हैं। इनमें संशोधन नं० 1156 काफ़ी व्यापक है और इसलिए यह पेश किया जा सकता हैं। यह है श्री ब्रजेश्वरप्रसाद के नाम में। प्रस्तावकर्त्ता सदस्य अनुपस्थित हैं अत: यह संशोधन नहीं पेश हो रहा है।

आगे चलकर सर्वाधिक व्यापक संशोधन है नं० 1163 का और यह पेश हो सकता है। पर चूंकि इसके प्रस्तावकर्त्ता सदस्य भी अनुपस्थित हैं, इसलिए यह भी नहीं पेश हो रहा है।

अब मैं श्री शंकरराव देव को अनुमति देता हूं कि वह अपना संशोधन नं० 1160 उपस्थित करें।

श्री शंकरराव देव (बम्बई : जनरल): उपाध्यक्ष महोदय, मैं निम्नलिखित संशोधन उपस्थित कर रहा हूं जो कि मेरे नाम में है:

> "कि अनुच्छेद 50 के खण्ड (2) के उपखण्ड (क) में 'thirty members' (तीस से अन्यून सदस्यों) शब्दों की जगह 'one fourth of the total membership of the House' (कुल सदस्यों की एक चौथाई) शब्द रखे जायें।"

इस संशोधन की आवश्यकता उतनी स्पष्ट है कि इसके समर्थन में तर्क पेश करके सभा का समय लेना मेरे लिए जरूरी नहीं है। प्राभियोग लगाने का सवाल एक बड़ा ही गम्भीर सवाल है और अगर प्राभियोग सिद्ध हो जाता है तो प्रधान को, जो कि हमारे राजकीय प्रतिष्ठा तथा राष्ट्र के सार्वजनिक जीवन का प्रतिनिधान करने वाला सर्वश्रेष्ठ नागरिक समझा जायेगा, बड़ी ही क्षति उठानी पड़ेगी। इसलिए अगर कोई व्यक्ति प्रधान पर प्राभियोग लगाने की बात सोचता है

तो उसे इस काम की गम्भीरता को पूर्णरूपेण सोच समझ कर ही ऐसा करना चाहिए और प्राभियोग के समर्थन के लिए सदस्यों की एक पर्याप्त संख्या होनी चाहिये। प्रस्तावित कार्यवाही की गम्भीरता को देखते हुए 30 की संख्या बहुत थोड़ी है। इसलिए मेरा सुझाव है कि सभा के कुल सदस्यों की एक चौथाई संख्या द्वारा समर्थित होने पर ही प्रधान पर ऐसा गम्भीर आरोप लगाया जाना चाहिए क्योंकि प्रधान राज्य की प्रतिष्ठा का प्रतिमूर्ति होता है। आशा है, सभा इस संशोधन को स्वीकार करेगी।

***उपाध्यक्षः** संशोधन नं० 1161 के प्रस्तावक क्या यह चाहते हैं कि उनके संशोधन पर मत लिया जाये?

***एक माननीय सदस्यः** नहीं, श्रीमान्।

उपाध्यक्षः क्या मि. काजी सैयद करीमुद्दीन यह चाहते हैं कि उनके संशोधन (नं० 1162) पर मत लिया जाय?

***काजी सैयद करीमुद्दीनः** हां, श्रीमान्।

***उपाध्यक्षः** प्रो. शिब्बनलाल सक्सेना अपना संशोधन नं० 1164 पेश कर सकते हैं।

सदस्य महोदय सभा में नहीं हैं इसलिए यह संशोधन पेश नहीं हो रहा है।

संशोधन 1157, 1158, और 1159 एक ही आशय के हैं। श्री जसपतराय कपूर अपना संशोधन नं० 1157 पेश कर सकते हैं।

(संशोधन पेश नहीं किया गया।)

श्री बी.एम. गुप्ते (बम्बई : जनरल): उपाध्यक्ष महोदय, मैं यह प्रस्ताव उपस्थित करता हूं किः

> "अनुच्छेद 50 के खण्ड (2) के उपखण्ड (क) में 'after a notice' (एक ... सूचना के बाद) शब्दों की जगह 'at least after 14 days notice' (कम से कम सूचना के 14 दिन बाद) शब्द रखे जायें।"

[श्री बी.एम. गुप्ते]

प्रावधान का जो वर्तमान रूप है उसमें केवल सूचना का ही उल्लेख है पर इसके लिए कोई अवधि नहीं रखी गई है। अगर आप अनुच्छेद 74, 77 और 156 को पढ़ें जिसमें संसद् के सभापति (चेयरमैन), अध्यक्ष तथा उपाध्यक्ष को तथा राज्य के विधान-मण्डल के अध्यक्ष और उपाध्यक्ष को हटाने का प्रावधान किया गया है, तो देखेंगे कि वहां सब जगह 14 दिनों की सूचना की बात कही हुई है। कोई कारण नहीं है, वही व्यवस्था यहां भी क्यों न रखी जाये। इसलिए मैंने अपने संशोधन में 14 दिनों की सूचना की बात रखी है। आशा है सभा इसे स्वीकार करेगी।

उपाध्यक्षः क्या माननीय सदस्य (मि. मोहम्मद ताहिर) जिन्होंने संशोधन नं० 1159 की सूचना दी है, यह चाहते हैं कि उनके संशोधन पर मत लिया जाये?

***श्री मोहम्मद ताहिर** (बिहार : मुस्लिम): हां, श्रीमान्।

***उपाध्यक्षः** संशोधन नं० 1166, 1167, 1168 तथा 1169 समान आशय के हैं। इनमें से नं० 1167 को पेश किया जा सकता है। यह डॉ. अम्बेडकर के नाम में है।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर** (बम्बई : जनरल): मैं यह प्रस्ताव रखता हूं कि:

> "अनुच्छेद 50 के खण्ड (2) के उपखण्ड (ख) में 'supported by' (समर्थन ····· किया हो) शब्दों के स्थान पर 'passed by a majority of' (का पारण ····· बहुमत ने ·····) शब्द रखे जायें।"

***उपाध्यक्षः** अब संशोधन नं० 1166 आता है, जो मि. मोहम्मद ताहिर और मि. सैयद जाफ़र इमाम के नाम में है।

***श्री मोहम्मद ताहिरः** मैं इस पर विचार या बहस करना चाहता हूं। मेरा संशोधन डॉ. अम्बेडकर के संशोधन से सर्वथा भिन्न है। ये दोनों एक आशय के नहीं हैं।

***उपाध्यक्षः** इस पर मत नहीं लिया जा सकता है। जब विस्तारपूर्वक वादानुवाद होने लगे तो उस समय आप भी अपनी बात कह सकते हैं। मेरी समझ से यही ज्यादा अच्छा होगा।

संशोधन नं० 1168 मि. नजीरुद्दीन अहमद के नाम में है। क्या आप चाहते हैं कि इस पर मत लिया जाये?

***श्री नजीरुद्दीन अहमद** (पश्चिमी बंगाल : मुस्लिम): हां, श्रीमान्।

***उपाध्यक्षः** यह संशोधन तो डॉ. अम्बेडकर के संशोधन से मिलता हुआ दिखाई देता है। इसके बाद आता है संशोधन नं० 1169, जो मि. काजी सैयद करीमुद्दीन के नाम में है। क्या आप चाहते हैं इस पर मत लिया जाये?

***काजी सैयद करीमुद्दीनः** नहीं, श्रीमान्।

***उपाध्यक्षः** इसके बाद मेरी सूची में दूसरा संशोधन है नं० 1170 का, जो कि काज़ी सैयद करीमुद्दीन के नाम में है।

***काज़ी सैयद करीमुद्दीनः** उपाध्यक्ष महोदय, मेरा प्रस्ताव है किः

"अनुच्छेद 50 के खण्ड (2) के उपखण्ड (ख) के बाद निम्नलिखित नया खण्ड जोड़ा जाये:

'(c) the meeting shall be presided by the Chief Justice of the Supreme Court whose decision on the admissibility of evidence shall be final.' "

[(ग) बैठक का सभापतित्व सर्वोच्च न्यायालय का प्रधान न्यायाधीश करेगा और इस सम्बन्ध में कि साक्ष्य स्वीकार्य है या नहीं, उसका निर्णय अन्तिम होगा।]

अनुच्छेद 50 में इस बात का उल्लेख नहीं किया गया है कि प्रधान पर प्राभियोग के लिए जो बैठक होगी, उसका सभापतित्व कौन करेगा। इसलिए मैंने एक उपखण्ड और जोड़ने का यहां प्रयास किया है, जिसमें कहा गया है कि ऐसी बैठक का सभापतित्व सर्वोच्च न्यायालय का प्रधान न्यायाधीश करेगा। अगर यह संशोधन न स्वीकार हुआ तो उस हालत में, मैं समझता हूं कि ऐसी बैठकों का सभापतित्व संसद् के अध्यक्ष या उप-प्रधान को करना होगा। स्पष्ट है कि उप-प्रधान के सम्बन्ध में आपत्ति की जा सकती है क्योंकि प्रधान के हटाये जाने पर सम्भवत: वही उस पद पर आसीन होंगे। और ऐसी बैठकों के सभापतित्व के लिए अध्यक्ष को भी अनुमति नहीं दी जा सकती है क्योंकि वह साधारणत:

[काजी सैयद करीमुद्दीन]

बहुमत वाले दल से ही चुना जाता है। और जब प्रधान पर प्राभियोग चलेगा तो स्वभावतः देश में इतनी राजनैतिक उत्तेजना फैल जायेगी कि अध्यक्ष अथवा उप-प्रधान में लाज़मी तौर पर एक परिवर्तन आ जायेगा जो ऊपर से न दिखाई देगा। इसमें शक नहीं कि भारतवर्ष और इंग्लैण्ड में ऐसे उदाहरण आपको मिलेंगे जब कि अध्यक्ष और उप-प्रधान ने सभा की परम्परागत उच्च मर्यादा का ही पालन किया है, किन्तु ऐसे समय पर जरूरत सिर्फ इसी बात की न होगी कि न्याय किया जाये, बल्कि यह भी आवश्यक होगा कि जनता को भी यह प्रत्यक्ष भास हो कि आप न्याय कर रहे हैं। ऐसे गम्भीर काल में, जब कि देश के सर्वश्रेष्ठ व्यक्ति पर प्राभियोग चल रहा हो, यह नितांत आवश्यक है कि न्याय करने वाली सभा का सभापतित्व सर्वोच्च न्यायालय का प्रधान न्यायाधीश ही करे।

इस सुझाव का एक और भी कारण है और वह महत्व रखता है। वह कारण यह है कि प्रधान पर लगाये गये प्राभियोग के सिलसिले में बहुत से कानूनी सवाल खड़े होंगे, बहुत से तथ्य के प्रश्न उठेंगे। साक्ष्य के स्वीकार किये जाने के सम्बन्ध में भी अनेक सवाल खड़े होंगे। शासन की संसदात्मक प्रणाली में यह कोई जरूरी नहीं है कि हर सभासद कानूनवेत्ता ही हो या न्यायाधीश ही हो और इसमें शक नहीं कि ऐसे मामलों में कानून सम्बन्धी तथा तथ्य सम्बन्धी गूढ़ प्रश्न उपस्थित होंगे, साक्ष्य की स्वीकृति का प्रश्न खड़ा होगा और ऐसे महत्त्वपूर्ण प्रश्नों के सम्बन्ध में निर्णय देना मामूली आदमी के लिए बड़ा ही मुश्किल होगा। अफवाह के आधार पर या केवल सुनी हुई बात के आधार पर ही अनाड़ी आदमी प्रधान पर प्राभियोग लगा सकता है। इस बात का निर्णय देने के लिये कि अमुक साक्ष्य स्वीकार किया जाये या नहीं, यह बहुत ही आवश्यक है कि ऐसी बैठकों का सभापतित्व ऐसा व्यक्ति करे जो कानूनी बुद्धि रखता हो और जिसे कानून संबंधी विविध बातों का अनुभव हो। इसलिए मेरा कहना यह है कि ऐसी बैठकों के सभापतित्व के लिए हमें सर्वोच्च न्यायालय के प्रधान न्यायाधीश से ही अनुरोध करना चाहिए जो साधारणतः सार्वजनिक जीवन से सदा तटस्थ रहा करता है। अमेरिका के विधान में इसी आशय का एक प्रावधान रखा गया है। दूसरे विधानों से हम केवल ऐसे ही प्रावधानों को ले रहे हैं जो हमारे प्रयोजन के लिए उपयुक्त हैं और ऐसे प्रावधान जो अनुकूल हैं, उन्हें हम नहीं रख रहे हैं यद्यपि वह हमारे लिए बड़े ही हितकर हैं। मैं डॉ. अम्बेडकर से आग्रह करूंगा कि वह इस संशोधन को अवश्य ही विधान में स्थान दें, विशेषतः इस बात को

दृष्टि में रख कर कि जब देश में राजनैतिक आवेश अपनी उग्रता पर रहेगा, उस हालत में अध्यक्ष या उप-प्रधान के लिए यह बहुत ही कठिन हो जायेगा कि वे अपनी तटस्थता स्थिर रख सकेंगे।

***उपाध्यक्ष:** संशोधन नं० 1171, 1173 और 1176 प्रो. के.टी. शाह के नाम में हैं। इन्हें एक-एक करके आप पेश कर सकते हैं।

***प्रोफेसर के.टी. शाह:** इनमें से क्या मैं केवल एक को ही पेश कर सकता हूं?

***उपाध्यक्ष:** आप तीनों को ही पेश कर सकते हैं।

***प्रोफेसर के.टी. शाह:** मैं यह प्रस्ताव रखता हूं, श्रीमान् कि:

"अनुच्छेद 50 के खण्ड (3) में 'either House' (किसी आगार) शब्दों के स्थान पर 'the People's House' (लोक-सभा), शब्द रखे जायें तथा 'or cause the charge to be investigated and the President shall have the right to appear and to be represented at such investigation' (दोषारोप का अनुसंधान करायेगा और उस अनुसंधान में उपस्थित होने का तथा अपना प्रतिनिधान कराने का प्रधान को अधिकार होगा) शब्द हटा दिये जायें।"

इस संशोधन से खण्ड का क्या रूप हो जायेगा यह मैं पढ़कर सुना देता हूं, ताकि सारी बात स्पष्ट हो जाये। खण्ड का संशोधित रूप यह होगा:

"When a charge has been so preferred by the House of the People, the other House shall investigate the charge.' "

(जब दोषारोप का पुरोधान लोक-सभा द्वारा किया जा चुके, तब दूसरा आगार दोषारोप का अनुसंधान करेगा।)

अब मैं दूसरे संशोधन को उपस्थित करता हूं जो मेरे नाम में है। मेरा प्रस्ताव है कि:

"अनुच्छेद 50 के खण्ड (3) में 'investigated' शब्द के बाद पूर्णविराम का चिह्न रखा जाये।"

फिर मेरा प्रस्ताव यह है कि:

"अनुच्छेद 50 के खण्ड (3) के बाद निम्नलिखित नया खण्ड जोड़ा जाये:

'(3A) The President shall have the right to appear and to be represented at such investigation.' "

[प्रो. के.टी. शाह]

(ऐसे अनुसंधान में उपस्थित होने का तथा अपना प्रतिनिधान कराने का प्रधान को अधिकार होगा।)

मैं पहले एक संशोधन रख चुका हूं, जिसमें कहा गया है कि दोषारोप के अनुसंधान का तथा मामले की सुनवाई का अधिकार क्रमश: लोक-सभा तथा राज्य-परिषद् को होना चाहिए और यह न होना चाहिए कि दोनों ही आगारों को यह अधिकार रहें। इसी संशोधन के अनुरूप मेरा प्रथम संशोधन है, जिसे मैं अभी पेश कर रहा हूं। दोषारोप का अनुसंधान दूसरे आगार को करना चाहिए जिसने कि दोषारोप का पुरोधान नहीं किया है और अनुसंधान के समय उपस्थित हो कर अपनी बात कहने का तथा अपना प्रतिनिधान कराने का प्रधान को अधिकार होना चाहिए। कानून-शास्त्र का यह एक प्राथमिक मूलभूत सिद्धांत है कि जिस व्यक्ति के विरुद्ध दोषारोप किया गया है, उसे यह अधिकार प्राप्त है, कि विचारक के समक्ष अपनी बात कहे। उसे यह भी अधिकार है, अनुसंधान के समय अथवा मामले की सुनवाई के समय योग्य एवं समुचित कानूनी सलाहकारों के ज़रिये वह अपना बचाव कर सके। इसीलिए तो इस संशोधन के द्वारा प्रधान को अपनी बात कहने का अधिकार दिया गया है और एक अतिरिक्त खण्ड रखकर निर्दिष्ट रूप से यह अधिकार दिया गया है, न कि इसे पहले के खण्ड में शामिल किया गया है जिसमें इस अधिकार के अलावा और भी कई बातों का उल्लेख है। सत्ता प्राप्त जनता को प्रधान पर दोषारोप करने का अधिकार है और मेरी राय में इस अधिकार पर कोई आंच न आनी चाहिए। इसी तरह प्रधान को भी दोषारोप के अनुसंधान के समय उपस्थित होकर अपनी बात कहने का तथा अपना प्रतिनिधान कराने का अधिकार प्राप्त है और इसका यहां स्पष्ट उल्लेख होना चाहिए। इन दोनों ही बातों को एक साथ मिलाकर न रखना चाहिए बल्कि इन्हें अलग-अलग खण्ड में रखना चाहिए, ताकि जाप्ते के सम्बन्ध में किसी भी शक की गुंजाइश न रहे। अत: इस संशोधन को उपस्थित करने में मेरा अभिप्राय यही है कि जांच के सम्बन्ध में कोई अस्पष्टता न रह जाये और किसी भी अगर मगर की गुंजाइश न रह जाये, जिसे वकीलों की चातुरी पेश कर सके या जिसका कि दलबंदी के आवेश में सहारा लिया जा सके। इसलिए सभा का और समय न लेकर मैं इन संशोधनों को स्वीकार करने की सभा से सिफारिश करता हूं।

***उपाध्यक्षः** बाद के तीन संशोधन, जो एक सिलसिले में रखे गये हैं, वह हैं नं० 1172, 1174 तथा 1175।

(ये संशोधन नहीं पेश किये गये।)

संशोधन नं० 1177, 1178 तथा 1179 एक ही आशय के हैं। इनमें से संशोधन नं० 1177 को उपस्थित किया जा सकता है।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** मैं प्रस्ताव रखता हूं किः

"अनुच्छेद 50 के खण्ड (4) में 'passed, supported by' शब्दों के स्थान पर 'passed by a majority of' शब्द रखे जायें।"

***उपाध्यक्षः** संशोधन नं० 1178 मि. मोहम्मद ताहिर तथा सैयद जाफ़र इमाम के नाम में है।

(मि. मोहम्मद ताहिर बोलने के लिए उठे।)

क्या आप चाहते हैं कि इस पर मत लिया जाय? विस्तृत रूप से जब इस पर वाद-विवाद हो, उस समय आप जो कुछ भी कहना चाहते हों, कह सकते हैं। उस समय मैं आपको इसका अवसर दूंगा।

***श्री मोहम्मद ताहिरः** मेरे संशोधन का आशय ही बिल्कुल भिन्न है। यह तो पेश होना चाहिए और इस पर बहस होनी चाहिए।

***उपाध्यक्षः** 'दो तिहाई' के सम्बन्ध में आप कोई खास सुझाव दे रहे हैं। अच्छी बात है, आप माइक पर आइये।

***श्री मोहम्मद ताहिरः** उपाध्यक्ष महोदय, मैं प्रस्ताव रखता हूं किः

"अनुच्छेद 50 के खण्ड (4) में 'not less than two-thirds of the total membership of the House' (आगार के समस्त सदस्यों की दो तिहाई से अन्यून संख्या द्वारा) शब्दों के स्थान पर 'a majority of the members present and voting' (उपस्थित तथा मतदान करने वाले सदस्यों के बहुमत से) शब्द रखे जायें।"

मैंने अपना संशोधन इसलिये रखा है कि प्रावधान का जो वर्तमान रूप है अर्थात् जहां दो तिहाई के बहुमत की बात कही गई है, वह गणतंत्रीय भावना से

[श्री मोहम्मद ताहिर]

बिल्कुल प्रतिकूल है और इसके कारण बहुत-सी कठिनाइयां, अनेक उलझनें पैदा हो जायेंगी। मैं सभा के सामने एक बिल्कुल सरल उदाहरण उपस्थित करता हूं। मैं समझता हूं कि जिला-बोर्ड के चेयरमैन के सम्बन्ध में यहां प्रत्येक सदस्य को यही अनुभव मिला होगा। जिला-बोर्ड का चेयरमैन अपने कुकृत्यों के लिए अपने पद से तब तक नहीं हटाया जा सकता, जब तक कि दो तिहाई सदस्य उसके विरुद्ध मत न दें। इस व्यवस्था का परिणाम यह है कि चाहे कितना ही अयोग्य या बेइमान चेयरमैन क्यों न हो, उसे पद से हटाना बहुत मुश्किल होता है क्यों कि उसके हाथ में शक्ति होती है और उसका उपयोग करके वह ऐसा प्रबन्ध कर लेता है कि दो-तिहाई सदस्य उसके विरुद्ध जायें ही नहीं और एक तिहाई से कुछ अधिक को वह सदा अपने पक्ष में बनाये रखता है। इसका परिणाम यह होता है कि यद्यपि सदस्यों का बहुमत उसके कारनामों के विरुद्ध है, फिर भी उसे पदच्युत करना उनके लिये असम्भव हो जाता है। प्रधान के सम्बन्ध में भी यही बात हो सकती है क्योंकि वह अधिकारारूढ़ रहेगा और उसके विरुद्ध प्राभियोग का कोई प्रस्ताव आता है, तो उसे पदच्युत करना सदस्यों के लिए बड़ा कठिन होगा। मैं कहता हूं, श्रीमान्, कि हम जो अपना यह विधान बना रहे हैं उसमें सबसे महत्त्वपूर्ण बात यही है कि हम इसके प्रत्येक अनुच्छेद को यहां केवल बहुमत से ही स्वीकार कर रहे हैं। यह बहुत ही महत्त्व की बात है। तो फिर एक प्राधिकारी के सम्बन्ध में, जिसके विरुद्ध प्राभियोग का प्रस्ताव आता है, क्यों न सभा में उपस्थित सदस्यों के बहुमत से ही उस पर निर्णय किया जाये? इसीलिए, श्रीमान्, मैंने यह संशोधन रखा है ताकि यह सब कठिनाइयां दूर हो जायं। आशा है सभा इस पर गम्भीरतापूर्वक विचार करेगी और संशोधन को स्वीकार करना ही वह तय करेगी। इन शब्दों के साथ मैं अपना प्रस्ताव सभा के समक्ष उपस्थित करता हूं।

(संशोधन नं. 1179 नहीं पेश किया गया।)

***उपाध्यक्ष:** बाद के संशोधन हैं नं. 1180, 1181 और 1182 के, जो कि मि. नजीरुद्दीन अहमद के नाम में हैं। इनको पेश करने की अनुमति मैं नहीं दे रहा हूं। अब संशोधन नं. 1183 पेश किया जा सकता है। यह है प्रो. के.टी. शाह के नाम में है।

***प्रोफेसर के.टी. शाहः** उपाध्यक्ष महोदय, मैं प्रस्ताव रखता हूं किः

"अनुच्छेद 50 के खण्ड (4) में 'such resolution shall शब्दों की जगह 'be placed before the People's House, and if adopted by the latter, shall' शब्द रखे जायें।"

खण्ड का संशोधित रूप यह होगाः

"If as a result of the investigation a resolution is passed, supported by not less than two-thirds of the total membership of the House by which the charge was investigated or caused to be investigated, declaring that the charge preferred against the President has been sustained, such resolution shall be placed before the People's House, and if adopted by the latter, shall have the effect of removing the President from his office as from the date on which the resolution is so passed."

(यदि अनुसंधान के परिणामस्वरूप, प्रधान के विरुद्ध पुरोधान किये गये दोषारोप की सिद्धि को घोषित करने वाला संकल्प, दोषारोप का अनुसंधान करने या कराने वाले आगार के समस्त सदस्यों की दो-तिहाई से अन्यून संख्या द्वारा पास हो जाता है, तो वह संकल्प लोक-सभा के सामने रखा जायेगा और यदि वह सभा उसे स्वीकार कर ले तो उसका प्रभाव यह होगा कि उसके पास होने की तिथि से प्रधान अपने पद से निष्कासित समझा जायेगा।)

श्रीमान्, मैंने अपने संशोधन के द्वारा एक त्रुटि को दूर करने का प्रयास किया है। वह त्रुटि यह है कि दोषारोप का अनुसंधान करने वाला आगार ज्यों ही अपना निर्णय दे देगा या ज्यों ही वह प्रस्ताव पास कर देगा, विधानान्तर्गत दी हुई योजना के अनुसार, उस प्रस्ताव के पास होते ही प्रधान स्वतः अपने पद से च्युत हो जायेगा। अपराधी के प्रति समुचित न्याय हो, यह हम लोगों की भावना है और उससे, मेरा ख्याल है कि, यह व्यवस्था मेल नहीं खाती है और खास कर के उस हालत में जब कि अपराधी एक सर्वोच्च पदस्थ व्यक्ति हो अथवा अपराध ऐसे हों जिनके सम्बन्ध में कि इस तरह का अनुसंधान अपेक्षित हो।

[प्रो. के.टी. शाह]

आखिर पूरी सम्भावना तो इसी बात की है कि ये सभी मामले ऐसे होंगे जिनमें राजनीति का ही प्रबल हाथ होगा। ये मामले ऐसे नहीं होंगे जिनमें केवल कानून सम्बन्धी प्रश्न या तथ्य सम्बन्धी प्रश्न ही सन्निहित होंगे। बल्कि ये मामले ऐसे होंगे जिनमें विशेष रूप से दृष्टिकोण का, अपनी-अपनी राय का ही सवाल सन्निहित रहेगा। इसलिए मेरा कहना यह है कि केवल एक आगार के निर्णय के आधार पर ही ऐसा न होना चाहिये कि ऐसे उच्च पदस्थ व्यक्ति को तुरन्त निष्कासित कर दिया जाये।

सभा के समक्ष कतिपय संशोधनों को उपस्थित करने का मुझे मौका मिला है और उन सभी में मैंने इसी बात पर ज़ोर दिया है कि एक आगार दोषारोप का अनुसंधान करे और दूसरा आगार मामले की सुनवाई करे; एक आगार अगर दोषारोप करता है तो दूसरे आगार को उन आरोपों के सत्यासत्य का विवेचन करना चाहिए। इस बात को देखते हुए मेरी समझ से यह नितान्त आवश्यक है बल्कि यों कहिए कि यही उचित और सही है कि प्रधान के निष्कासन के लिए केवल इतना ही अपेक्षित न हो कि वह दोषी पाया जाय और मामले की सुनवाई करने वाला आगार इस आशय का प्रस्ताव पास कर दे। बल्कि उसके निष्कासन के लिए यह भी अपेक्षित होना चाहिए कि दूसरा आगार भी जब उस प्रस्ताव का समर्थन कर दे तभी वह अपने पद से च्युत समझा जाये।

***श्री तजम्मुल हुसैनः** दूसरा आगार जिसने कि दोषारोप किया है?

***प्रोफेसर के.टी. शाहः** हां, जिसने दोषारोप किया है। इस तरह आप देखेंगे, संशोधन में मूल अनुच्छेद वाली ही व्यवस्था रखी गई, पर ज़रा परिवर्तित रूप में। यानी इस कार्रवाई के सम्बन्ध में दोनों आगारों का, या यों कहिए कि संसद् का एक मत होना ज़रूरी रखा गया है। यह कार्रवाई समूचे विधान-मण्डल की कार्रवाई समझी जाये और अन्ततोगत्वा यह कहना होगा कि यह कार्रवाई सत्ता प्राप्त जनता ने की है और अपने प्रतिनिधियों के द्वारा।

मैं नहीं समझता कि इस व्यवस्था से कोई ऐसी बाधा पहुंचती है जिससे समुचित रूप से न्याय न किया जा सके या उसमें देर हो। निश्चय ही, विलम्ब

करने के लिए या वक्त टालने के लिए यह व्यवस्था नहीं अपनाई जा रही है। इसके पक्ष में जो बात बहुत दृढ़तापूर्वक कही जा सकती है, वह यह है कि इससे इस बात का एक और मौका मिल जाता है कि लोगों के राजनैतिक आवेश शान्त हो जायें और सम्बन्धित व्यक्ति को समुचित निर्णय मिल सके या कम से कम अपने पक्ष का प्रतिपादन करने का ही उसे मौका मिल सके, जो कि अन्यथा उसे नहीं उपलब्ध हो सकता है।

मैं विशेष करके चिन्तित इस बात के लिए हूं कि मामले की सुनवाई का अधिकार—और कम से कम मेरी योजना के अनुसार—ऊपर वाले आगार को प्राप्त है जो कि अपेक्षाकृत एक छोटी सभा होगी और जिसमें विशेष हितों के तथा विभिन्न प्रादेशिक घटकों यानी इकाइयों के ही प्रतिनिधि होंगे और इसलिए उस आगार में तो लोक-मत का सीधा प्रतिनिधान नहीं रहेगा। इसलिए, इस सम्बन्ध में उस सभा द्वारा स्वीकृत प्रस्ताव तुरन्त अमल में नहीं लाया जाना चाहिए, बल्कि जनता के प्रतिनिधियों को एक और मौका मिलना चाहिए कि इस सम्बन्ध में वही अपना अन्तिम निर्णय दें।

चाहे आप इसे प्रविलम्ब के रूप में समझें, या राज्य से प्राप्त क्षमा के रूप में समझें–इसके लिए ठीक-ठीक क्या कहूं यह नहीं सोच पाता हूं—पर मेरी राय में ऐसा करके आप इस बात के लिए एक और मौका देंगे कि वास्तविक न्याय हो और यह न होने पाये कि क्षणिक आवेश या राजनीतिक तनातनी के कारण यही न्याय न हो सके। इसलिए मैं तो सभा से कहूंगा कि ऐसा करने में अगर हम भूल भी कदाचित् कर रहे हैं तो वह भूल न्याय तथा बन्धुता के पक्ष में होगी और इसलिए मैं कहूंगा कि यह संशोधन स्वीकृत होना चाहिए।

(संशोधन नं० 1184 नहीं पेश किया गया।)

***उपाध्यक्षः** संशोधन नं० 1185 मि. नज़ीरुद्दीन अहमद!

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमदः** उपाध्यक्ष महोदय, मैं यह प्रस्ताव रखता हूं कि:

"अनुच्छेद 50 के खण्ड (4) में 'date on which' शब्दों की जगह 'time when' शब्द रखे जायें।

[श्री नजीरुद्दीन अहमद]

यह एक आवश्यक संशोधन है, श्रीमान्। इसके स्वीकार होने से गतिरोध की अवस्था न उत्पन्न होने पायेगी। आशा है, माननीय सदस्यगण मेरी बात को ध्यान से सुनने की कृपा करेंगे। डॉ. अम्बेडकर मेरी बात नहीं सुन रहे हैं।

***श्री तजम्मुल हुसैनः** समूची सभा आपकी बात सुन रही है।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमदः** समूची सभा भले इसे माने, पर जब तक डॉ. अम्बेडकर इसे नहीं मानते, समूची सभा का मान लेना भी कोई माने नहीं रखता। (*बाधा*)

***उपाध्यक्षः** यह कहना तो, मेरी समझ से, प्रकारान्तर से उनकी निन्दा करना है। (*बाधा*)

***श्री तजम्मुल हुसैनः** हम आपकी बात सुनना चाहते हैं। (*बाधा*)

***श्री एच.वी. कामत** (मध्यप्रान्त और बरार : जनरल): यह कहना क्या नियमानुकूल है, श्रीमान्?

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमदः** मैं इसे वापस लेता हूं। अब संशोधन नं॰ 1185 को मैं पेश करता हूं। मैं इस संशोधन को बहुत ही महत्त्वपूर्ण समझता हूं और चाहता हूं कि सभा मेरी बात ध्यान से सुने। इसका सम्बन्ध है प्रधान पर चलाये गये प्राभियोग से। यह कहा गया है कि प्रधान के विरुद्ध लगाये गये दोषारोप की सिद्धि को घोषित करने वाले प्रस्ताव को ज्यों ही सम्बन्धित आगार पास कर देता है—यहां मेरा संकेत है अनुच्छेद 50 के खण्ड (4) की ओर—तो इसका प्रभाव यह होगा कि उसी तिथि से जब कि प्रस्ताव पास हुआ, प्रधान अपने पद से निष्कासित समझा जायेगा। मेरा कहना है, श्रीमान्, कि इससे तो गतिरोध की दशा उत्पन्न हो जायेगी। एक दूसरे अनुच्छेद में यानी अनुच्छेद 54 के खण्ड (1) में यह कहा गया है कि प्रस्ताव द्वारा ज्यों ही प्रधान निष्कासित होगा उसी दिन से उसके स्थान पर उप-प्रधान आसीन हो जायेगा। यहां अर्थात् अनुच्छेद 54 (1) में यह भी कहा गया है कि उप-प्रधान प्रधान के स्थान पर तब तक कार्य करेगा, जब तक कि नया प्रधान अपने पद पर आसीन न हो जाये। इस अनुच्छेद के सम्बन्ध में भी एक संशोधन आया है, जिसकी संख्या है 1207। मेरा कहना है, श्रीमान्, कि प्रधान को अगर हटाया जाता है तो वह उस समय से पदच्युत समझा

जायेगा, जब कि तत्सम्बन्धी प्रस्ताव पास हुआ है न कि उस दिन से जिस दिन कि प्रस्ताव पास हुआ है। मैं सभा से अनुरोध करूंगा कि वह इस सम्बन्ध में इस परिस्थिति पर विचार करे। मान लीजिए, अनुच्छेद के खण्ड (4) के अधीन अधिकृत आगार ने इस सम्बन्ध में 1 बजे प्रस्ताव पास किया और फिर इसी अनुच्छेद के अनुसार प्रधान उसी दिन से अपने पद से च्युत कर दिया जाता है, जिस दिन कि प्रस्ताव पास हुआ। अब मैं पूछता हूं कि उस दिन प्रस्ताव के पास होने के पहले यानी 1 बजे से पहले प्रधान ने जो काम किये होंगे उनके सम्बन्ध में क्या होगा? हो सकता है कि प्रधान ने उसी दिन प्रातःकाल, विधान के अधीन, सद्यस्कृत्यस्थिति की घोषणा कर दी हो, हो सकता है कि किसी विधेयक पर उसने उस दिन सवेरे अपनी स्वीकृति दी हो; हो सकता है कि उस दिन 1 बजे से पहले उसने संघ-न्यायालय के लिये किसी को न्यायाधीश नियुक्त किया हो, हो सकता है उसने अपनी पदच्युति से पहले किसी मन्त्रिमण्डल को बरखास्त या नियुक्त किया हो। अगर हम इस खण्ड (4) को इसी रूप में रहने देते हैं, तो इससे यह होगा कि इसके अनुसार प्रधान उसी दिन से पदच्युत समझा जायेगा जिस दिन कि प्रस्ताव पास हुआ है अर्थात् व्यतीत मध्य रात्रि से ही वह पदच्युत समझा जायेगा। ऐसी दशा में, मैं पूछता हूं कि उन कार्यों के सम्बन्ध में क्या होगा जिन्हें कि प्रधान ने उस महत्वपूर्ण दिवस पर, अपने निष्कासन से पहले सम्पादित किया हो? इसलिये मेरा कहना है, श्रीमान्, कि प्रधान की पदच्युति या उसके निष्कासन, का सम्बन्ध उस समय से होना चाहिए जब कि तत्सम्बन्धी प्रस्ताव पास हुआ है। अन्यथा यह होगा कि उसी दिन से उप-प्रधान उसके स्थान पर आ जायेगा। उस अनुच्छेद में यह कहा गया है कि जिस दिन प्रधान निष्कासित होगा उसी दिन से उसका स्थान रिक्त हो जायगा। इसका मतलब यह हुआ कि निष्कासन के पहले ही वह निष्कासित समझा जायेगा। इस अवस्था में मान लीजिये उप-प्रधान यह कहता है कि मैं तो उस दिन के प्रातःकाल से ही प्रधान हूं जिस दिन कि प्रधान निष्कासित किया गया है। अगर वह उस दिन के प्रातःकाल से ही अपने को प्रधान मान बैठता है तो इसका क्या नतीजा होगा? वह यह कहता है कि प्रधान के स्थान पर मैं प्रातःकाल से ही आसीन हूं और प्रधान यह कहता है कि 1 बजे से पहले तो मैं ही नियमानुसार प्रधान के रूप में कार्य

[श्री नजीरुद्दीन अहमद]

कर रहा था। ऐसी सूरत में क्या होगा? इसलिये मेरा यह कहना है, श्रीमान्, कि इस अनुच्छेद में यह रखना "कि प्रधान प्रस्ताव पास होने के दिन से ही पदच्युत समझा जायेगा" बड़ा दु:खद होगा। इससे बड़ी जटिलता उत्पन्न हो जायेगी। इससे वैधानिक गतिरोध उत्पन्न हो जायेगा; फिर शायद संधान-न्यायालय को इस सम्बन्ध में निर्णय देना पड़ेगा और उसके सामने कोई प्रामाणिक कागज़ात न होंगे; न समय, तिथि आदि का विवरण होगा। ऐसी हालत में, सहज बुद्धि तो यही कहती है कि प्रधान उस वक्त तक अपने पद पर आसीन समझा जायेगा जब तक कि प्रस्ताव पास होते ही वह निष्कासित न हो जाये। ज्यों ही प्रस्ताव पास होगा प्रधान अपने पद पर न रह जायेगा; किन्तु प्रस्ताव पास होने तक तो उसके सभी कार्य वैध समझे जायेंगे। इस प्रयोजन के लिए यह संशोधन आवश्यक है। मूल अनुच्छेद में कहा गया है कि जिस दिन कि वह निष्कासित होगा, उस दिन से ही वह पदच्युत समझा जायेगा किन्तु संशोधन में यह कहा गया है कि वह उस समय से अपदस्थ समझा जायेगा जब कि प्रस्ताव पास हुआ है। इसी आशय का संशोधन अनुच्छेद 54 के सम्बन्ध में भी रखा गया है। अनुच्छेद 54 में कहा गया है कि उप-प्रधान उस तिथि तक प्रधान के रूप में कार्य करेगा जब तक कि नया प्रधान न नियुक्त हो जाये। वस्तुत: यहां भी समय का ही उल्लेख होना चाहिए, तिथि का नहीं। यहां भी यही होना चाहिए कि उप-प्रधान उस समय तक प्रधान के रूप में कार्य करेगा जब तक कि नया प्रधान न प्रधान न निर्वाचित हो जाये। अगर हम समय की बात छोड़ कर समूचे दिन का उल्लेख करते हैं तो इससे जटिलताएं पैदा होंगी। सभा को इस पर ध्यानपूर्वक विचार करना चाहिए और इसे स्वीकार करना चाहिये। उस दिन अपने निष्कासन के समय से पहले प्रधान ने जो काम किये होंगे, उनकी वैधानिकता का प्रश्न बड़ी अड़चनें पैदा कर देगा।

***श्री तजम्मुल हुसैन:** एक औचित्य प्रश्न की ओर ध्यान आकृष्ट करने के लिए मैं खड़ा हो रहा हूं, श्रीमान्। जब मि. नज़ीरुद्दीन अहमद अपना संशोधन पेश

कर रहे थे तो उन्होंने खुद कहा कि वह सभा या सभाध्यक्ष को सम्बोधित करके नहीं बोल रहे हैं बल्कि डॉ. अम्बेडकर से कह रहे हैं कि वह अन्य काम में व्यस्त हैं। अब सवाल यह है कि सदस्य जब यहां अपना वक्तव्य देता है तो वह सभाध्यक्ष को, सभा को ही सम्बोधित करके बोलता है न कि किसी सदस्य विशेष को, जो विधेयक का कर्त्ताधर्त्ता रहता है। इसलिए मेरा कथन है कि आपको चाहिए कि आप मि. नज़ीरुद्दीन अहमद को इस बात का दोषी करार दें कि उन्होंने सभा का तथा सभाध्यक्ष का अपमान किया है। अगर आप उनको दोषी पाते हैं तो उन पर सभा को दोषारोप करना चाहिये जैसा कि इस अनुच्छेद 50 के अधीन प्रधान पर किया जा सकता है। चूंकि अभी दूसरी सभा निर्मित नहीं हुई जो कि उनके विरुद्ध दोषारोप का पुरोधान करे। यही सभा उनके विरुद्ध लगाये गये दोषारोप की सुनवाई कर सकती है, क्योंकि यह सर्वसत्ता सम्पन्न है। हम ही लोग उनके विरुद्ध लगाये गये दोषारोप की सुनवाई करेंगे और आपकी ही अध्यक्षता में यह सुनवाई होगी। माननीय सदस्य ने जानबूझ कर यह कहा है कि वह सभा या सभाध्यक्ष से नहीं बोल रहे हैं, इसलिये सभाध्यक्ष का तथा सभा का अपमान करने के वह दोषी हैं। मैं, इस सम्बन्ध में आपका निर्णय चाहता हूं।

***उपाध्यक्षः** समुचित रूप से विचार कर लेने के बाद मैं इस पर निर्णय दूंगा। आवेश में आकर मैं कुछ नहीं करना चाहता।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमदः** मैं किसी सदस्य विशेष को सम्बोधित करके नहीं बोल रहा था। मैं तो केवल इस बात पर जोर दे रहा था कि सभा का जो सर्वाधिक महत्वपूर्ण सदस्य है उसे ध्यानपूर्वक सारी बातों को सुनना चाहिए।

***उपाध्यक्षः** अब हम दूसरे संशोधन को लेते हैं जिसकी संख्या है 1186 ।

***प्रोफेसर के. टी. शाहः** उपाध्यक्ष महोदय, सविनय मैं यह प्रस्ताव रखता हूं कि

> "अनुच्छेद 50 के खण्ड (4) के अन्त में 'by both Houses of Parliament' शब्द जोड़ दिये जायें।"

[प्रोफेसर के.टी. शाह]

इन शब्दों के रखने पर संशोधन का रूप यह होगा—मैं आरम्भ की चार पंक्तियां नहीं पढ़ रहा हूं क्योंकि उन्हें पहले ही पढ़ चुका हूं—अन्तिम दो पंक्तियां इस तरह होंगी:

> "which resolution shall have the effect of removing the President from his office as from the date on which the resolution is passed by both Houses of Parliament."
>
> (उस संकल्प का प्रभाव यह होगा कि दोनों आगारों द्वारा उसके पास किये जाने की तिथि से प्रधान अपने पद से निष्कासित समझा जायेगा।)"

इस समय मैं आपको यहां का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण सदस्य समझता हूं न कि मसौदा-समिति के अध्यक्ष को। इसलिए आपकी मार्फत ही मैं सभा से अपनी बात कहूंगा और आशा है सभा उन तर्कों को, जिन्हें मैं यहां उपस्थित करने जा रहा हूं, सहानुभूतिपूर्वक सुनेगी। सभा के अन्य सभी सदस्यों को मैं समान महत्त्व देता हूं।

जो बात मैं कहना चाहता हूं वह यह है कि वह संकल्प जिसके द्वारा दोषारोप सिद्ध घोषित किया जाता है, वह दोनों ही आगारों द्वारा स्वीकृत होना चाहिए न कि केवल एक आगार द्वारा ही। मैंने अपने संशोधनों में यह कहा है कि एक आगार को दोषारोप का पुरोधान करना चाहिए और दूसरे आगार को उसकी सुनवाई करनी चाहिए और एक संकल्प (प्रस्ताव) पास करके अपना फैसला देना चाहिए। वह संकल्प, फिर अन्त में दूसरी सभा द्वारा भी समर्थित होना चाहिए।

मैं यह कहता आ रहा हूं कि जब तक ऐसा नहीं किया जाएगा, समुचित रूप से न्याय न हो सकेगा। इसलिए न्याय तथा औचित्य के हित में, संशोधनों के परिणामस्वरूप जिन्हें मैं यहां पहले पेश कर चुका हूं, यह संशोधन आना ही चाहिए। सम्बन्धित संकल्प दोनों ही आगारों द्वारा पास होना चाहिए और यह उसी दिन प्रभाव में आना चाहिए जब कि दूसरे आगार ने, यानी जिसने कि प्राभियुक्त प्रधान के मामले की सुनवाई न की हो, वह भी सुनवाई करने वाले अन्य आगार के साथ-साथ इसे पास कर दे।

***उपाध्यक्ष:** संशोधन नं० 1187 ।

***काजी सैयद करीमुद्दीन:** उपाध्यक्ष महोदय, जो संशोधन मेरे नाम में है उसे मैं उपस्थित करता हूं। संशोधन यह है:

"कि अनुच्छेद 50 के खण्ड (4) के अन्त में निम्नलिखित अंश जोड़ दिया जाये:

'and it shall operate as a disqualification to hold and enjoy any office of honour, trust or profit under the Indian Union.'

(और इसका प्रभाव यह होगा कि भारतीय संघ के अधीनवर्ती किसी भी सम्मान, विश्वास या लाभ के पद के लिए वह निर्योग्य समझा जायगा।)"

अनुच्छेद 50 के खण्ड (4) में यह तो कहा गया है कि अनुसंधान के फलस्वरूप अगर दोषारोप सिद्ध हो जाता है और इस सिद्धि को घोषित करने वाला प्रस्ताव पास हो जाता है, तो प्रधान अपने पद से निष्कासित हो जायेगा। किन्तु खण्ड (4) इसके लिए कोई निर्योग्यता नहीं लागू करता है। इसलिए मैंने यह संशोधन रखा है कि अनुसंधान के फलस्वरूप दोषारोप यदि सिद्ध घोषित होता है तो प्रधान अपने पद से हटा दिया जायगा और इसके फलस्वरूप उस पर यह निर्योग्यता लागू होगी कि वह सम्मान, विश्वास या लाभ का कोई भी पद जो कि भारतीय संघ के अधीन होगा उसे न धारण कर सकेगा। आशा है सभा इसे स्वीकार करेगी

(संशोधन नं० 1188 और 1189 नहीं पेश किए गये।)

***उपाध्यक्ष:** अब इस अनुच्छेद पर विस्तारपूर्वक बहस की जा सकती है।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी** (मद्रास : जनरल): इसके पहले कि इस अनुच्छेद पर विस्तारपूर्वक वादानुवाद की आप अनुमति दें, मैं श्री शंकरराव देव के संशोधन नं० 1160 के सम्बन्ध में एक छोटा-सा संशोधन रखना चाहता हूं ताकि उनके संशोधन का स्वरूप ठीक हो जाये। उस संशोधन में यह कहा गया है कि "one-fourth of the total membership of the House" शब्द बदले में रखे जायें। किन्तु सही रूप में यह यों होगा कि "one-fourth of the total number of members" श्री शंकरराव देव के संशोधन को अगर सभा

[श्री टी.टी. कृष्णमाचारी]

स्वीकार कर लेती है, तो उस हालत में यह छोटा-सा संशोधन जिसका मैं सुझाव दे रहा हूं वह बहुत आवश्यक हो जायगा। यदि आप यह समझते हों कि अनुच्छेद पर विस्तृत बहस की अनुमति देने से पहले यह संशोधन पेश हो जाना चाहिए तो इसे अभी पेश किया जा सकता है।

***उपाध्यक्ष:** क्या सभा इस बात की अनुमति देती है कि अर्थ को और स्पष्ट करने के लिए यह संशोधन पेश किया जाये?

***माननीय सदस्यगण:** हां।

***उपाध्यक्ष:** तब, श्री कृष्णमाचारी, जाप्ते के तौर पर आप इसे उपस्थित कर सकते हैं।

***श्री टी.टी. कृष्णमाचारी:** मेरा प्रस्ताव यह है कि:

> "श्री शंकरराव देव द्वारा उपस्थित संशोधन नं० 1160 में 'one-fourth of the total membership of the House' शब्दों के स्थान पर 'one-fourth of the total number of members' शब्द रखे जायें।"

***उपाध्यक्ष:** अब इस अनुच्छेद पर श्री कामत अपनी राय जाहिर कर सकते हैं।

***श्री एल. कृष्णास्वामी भारती** (मद्रास : जनरल): उस हालत में अनुच्छेद 50 के खण्ड (2) के उपखण्ड (ख) में थोड़ा परिवर्तन करना आवश्यक है। इस उपखण्ड में कहा गया है कि "unless such resolution has been supported by not less than two-thirds of the total membership of the House' (इस संकल्प का समर्थन उस आगार के समस्त सदस्यों की दो तिहाई से अन्यून संख्या ने न किया हो) यहां भी यही बात आती है और इस उपखण्ड में भी आवश्यक परिवर्तन होना चाहिए।

***उपाध्यक्ष:** श्री कामत!

***श्री एच.वी. कामत:** उपाध्यक्ष महोदय, यह बड़ा ही महत्त्वपूर्ण अनुच्छेद है, क्योंकि इसमें भारतीय संघ के प्रधान के विरुद्ध प्राभियोग लगाने और उसे

निष्कासित करने के सम्बन्ध में प्रावधान किया गया है। किसी मामूली मुकद्दमे में, किसी फौजदारी के मुकद्दमे में न्यायाधिकरण की अध्यक्षता करने वाला प्राधिकारी एक ऐसा व्यक्ति होता है जो बड़े ही शुद्ध हृदय का होता है और जिससे यह आशा की जाती है कि वह पक्षपात-शून्य रहेगा। आशा है कि भारतवर्ष में हम लोगों को इस अनुच्छेद का सहारा लेने की कभी आवश्यकता ही न पड़ेगी और हमारे सभी प्रधान सदा वैज्ञानिक मार्गों पर ही चलेंगे और प्राभियोग से वह सदा ऊपर ही रहेंगे। किन्तु फिर भी, श्रीमान्, हमें मानवी दुर्बलताओं के विरुद्ध कुछ न कुछ व्यवस्था तो करनी ही पड़ेगी और यही कारण है कि अपने विधान में हमें ऐसा अनुच्छेद रखना पड़ रहा है। किन्तु जब भारतीय गणतंत्र के प्रधान पर विधान के उल्लंघन का दोषारोप किया जाये और उस मामले की सुनवाई हो तो उस स्थिति के लिए यह नितान्त आवश्यक है, परम वांछनीय है कि इस सम्बन्ध में अनुसंधान करने वाली सभा का अध्यक्ष एक ऐसा व्यक्ति बनाया जाये तो परम शुद्ध हो, जो पूर्णतः पक्षपात-शून्य हो और राजनैतिक दलबंदी से ऊपर हो। इस दृष्टि से मि. काजी करीमुद्दीन का संशोधन महत्त्व रखता है। अनुच्छेद में कहा गया है—मेरा संकेत है इस अनुच्छेद के खण्ड (3) की ओर—कि जब दोषारोप का पुरोधान संसद् के किसी आगार द्वारा इस प्रकार किया जा चुके तब दूसरा आगार उस दोषारोप का अनुसंधान करेगा या करायेगा। सम्भव है दूसरा आगार दोषारोप का स्वयं अनुसंधान करे या हो सकता है वह उसके लिए एक न्यायाधिकरण (tribunal) नियुक्त कर दे जिसमें कुछ तो उस आगार के ही सदस्य हों और कुछ बाहर के लोग हों। किन्तु इन दोनों ही सूरतों में यह बहुत ज़रूरी है कि दोषारोप का अनुसंधान करने वाले आगार को अध्यक्ष की अध्यक्षता में प्राभियोग सम्बन्धी कार्यवाही न की जाये। मान लीजिए कि उत्तर आगार (Upper House) ने दोषारोप का पुरोधान किया और अवर आगार (Lower House) दोषारोप का अनुसंधान करता है। अब स्थिति क्या होगी? अवर आगार की अध्यक्षता उसका अध्यक्ष करता है तो क्या लोक-सभा अर्थात् अवर आगार का अध्यक्ष ही प्राभियोग सम्बन्धी कार्यवाही के समय अध्यक्षता करेगा? अध्यक्ष प्रायः पार्टी का ही आदमी होता है और प्रधान पर अतिक्रमण के लिए प्राभियोग लगाया जाता है प्रायः उसी सूरत में जब कि प्रधान और अधिकारारूढ़ दल के बीच किसी बात को लेकर संघर्ष पैदा हो जाता है। ऐसी अवस्था में स्वाभाविक है कि अध्यक्ष से, जो कि उस दल का ही सदस्य होगा, आप यह आशा नहीं कर सकते कि वह उस मामले में पक्षपात-शून्य रहेगा और अपना हृदय पूर्णतः

[श्री एच.वी. कामत]

शुद्ध रखेगा। अब मान लीजिए कि अवर आगार ने दोषारोप का पुरोधान किया है और उत्तर आगार उसका अनुसंधान करता है। अनुच्छेद का जो वर्तमान स्वरूप है उसके अनुसार उप-प्रधान कार्यवाही की अध्यक्षता करेगा। किन्तु हमें यह ख्याल रखना होगा, श्रीमान्, कि मानव एक ऐसी प्राणी है जिसमें कमजोरियां रहती ही हैं। हो सकता है कि उप-प्रधान के मन में यह विचार उत्पन्न हो कि प्रधान के प्राभियुक्त होने और हटाये जाने पर वही उस पद पर आसीन होगा। इसलिए उप-प्रधान तटस्थ न रह सकेगा, उसको अपना स्वार्थ दिखाई देगा क्योंकि अगर दोषारोप सिद्ध होता है और प्रधान हटा दिया जाता है तो राज्य-परिषद् का सभापति ही अर्थात् उप-प्रधान ही उसकी जगह पर आयेगा। इसलिए हो सकता है कि स्वार्थ से प्रेरित होकर वह यह चाहे कि दोषारोप सिद्ध होना ही चाहिए। इसलिए दोनों ही सूरतों में, चाहे लोक-सभा में दोषारोप की सुनवाई हो या उत्तर आगार में, उस आगार के अध्यक्ष या सभापति से आप यह आशा नहीं कर सकते कि वह सर्वथा तटस्थ रहेगा, दलगत राजनीति से अथवा दल सम्बन्धी आवेश से ऊपर रहेगा और उस मामले में अपने को सर्वथा शुद्ध रखेगा। इसलिए यह नितान्त आवश्यक है कि भारत का प्रधान न्यायाधीश ही, दोषारोप के अनुसंधान की कार्यवाही की अध्यक्षता करे। न केवल मुकद्दमे के संचालन के सम्बन्ध में ही बल्कि सभी मामलों में; जैसे कि साक्ष्य की स्वीकृति का सवाल या तद्विषयक अन्य सभी बातों में प्रधान न्यायाधीश का निर्णय ही आखिरी होना चाहिए। आपकी अनुमति से, श्रीमान्, श्री ए.सी. लाफलिन द्वारा लिखी हुई पुस्तक "दी कान्स्टीट्यूशनल हिस्ट्री ऑफ दी युनाइटेड स्टेट्स" से मैं एक उद्धरण देता हूं। उन्होंने लिखा है:

> "जब प्रेसीडेंट एंड्रयू जानसन के विरुद्ध प्रधान न्यायाधीश की अध्यक्षता में सिनेट के सामने मुकद्दमा चल रहा था तो साक्ष्य की स्वीकृति के सम्बन्ध में एक ऐसा ही प्रश्न उठा था और सिनेट ने यह फैसला किया था कि इस संबंध में अध्यक्ष ही निर्णय देगा और वह निर्णय मान्य होगा। किन्तु यदि उस सम्बन्ध में सिनेट में मतभेद हुआ तो उस हालत में स्वयं सिनेट ही उसका फैसला करेगी।"

अमेरिका के प्रेसीडेंट पर मामला चल रहा था और वहां का प्रधान न्यायाधीश कार्यवाही की अध्यक्षता कर रहा था। मुकद्दमे के दौरान में एक सवाल खड़ा हुआ

था, जिस पर यह निर्णय हुआ था कि साक्ष्य स्वीकार किया जाये या नहीं। इस संबंध में प्रधान न्यायाधीश को फैसला देने का अधिकार है। हमें अपने विधान में भी यही पद्धति अपनानी चाहिए। भारतीय गणतंत्र के प्रधान के प्राभियोग के सम्बन्ध में दोषारोप का अनुसंधान करने वाले निकाय की अध्यक्षता भारत के प्रधान न्यायाधीश को ही करनी चाहिए, जो न लोक-सभा का अध्यक्ष रहेगा और न राज्य-परिषद् का सभापति ही। अत: मि. काजी करीमुद्दीन ने जो इस आशय का संशोधन पेश किया है कि प्रधान के विरुद्ध लगाये गये प्राभियोग में दोषारोप के अनुसंधान की कार्यवाही प्रधान न्यायाधीश की अध्यक्षता में हो, मैं इसका पूर्णत: समर्थन करता हूं।

श्री के.टी. शाह ने भी एक संशोधन इस सम्बन्ध में पेश किया है। मेरा अभिप्राय है उनके संशोधन नं० 1183 से। उनकी योजना यह है कि दोषारोप का पुरोधान लोक-सभा ही करे अर्थात् प्राभियोग के सम्बन्ध में कार्रवाई शुरू होनी चाहिये लोक-सभा से, और उत्तर आगार ही दोषारोप का अनुसंधान करे। मैं उनके इस विचार से सहमत नहीं हूं कि दोषारोप का पुरोधान लोक-सभा ही करे। लोक-सभा या उत्तर आगार कोई भी दोषारोप का पुरोधान कर सकता है किन्तु अनुसंधान दूसरे ही आगार को करना चाहिये। किन्तु उनके संशोधन नं० 1183 की इस बात से मैं अवश्य सहमत हूं कि दोषारोप का अनुसंधान करने वाला आगार अगर दोषारोप को सही ठहराता है तो प्रधान के निष्कासन के सम्बन्ध में उस आगार का निर्णय ही अन्तिम न होना चाहिये। यदि दोषारोप सिद्ध होता जाता है तो उस सिद्धि को घोषित करने वाला प्रस्ताव पुन: उस आगार के पास जाना चाहिए जिसने कि दोषारोप का पुरोधान किया क्योंकि प्रधान का प्राभियोग और निष्कासन केवल एक आगार के मत के आधार पर न होना चाहिए बल्कि दोनों ही आगारों के मत के आधार पर यह होना चाहिए। इसलिए विधान में इस आशय का एक सुनिश्चित एवं स्पष्ट प्रावधान रखना जरूरी है कि प्रधान अगर अपने उच्च पद से हटाया जायगा तो न केवल एक आगार के मत के आधार पर ही, बल्कि दोनों आगारों के मत के आधार पर वह हटाया जायेगा। प्रो. के.टी. शाह ने जो तर्क उपस्थित किये हैं वह पूर्णत: युक्तिसंगत हैं। मुकद्दमे के सिलसिले में हो सकता है कि कई महीने बीत जायें और इस बीच में सम्भव है कि कतिपय

[श्री एच.वी. कामत]

विरोधी धारणायें तथा दलगत आवेश, जिनसे प्रेरित होकर दोषारोप का पुरोधान किया गया हो वह सब शान्त हो जायें और जब मामला पुनः दूसरे आगार के सामने जाये तो हो सकता है—मैं यह नहीं कहता कि हमेशा ऐसा ही होगा—पर सम्भव है कि जिन दोषों का आरोप उस आगार ने किया हो, उन पर पुनः विचार करने पर वह इस परिणाम पर पहुंचे कि न्यायतः और पूर्णतः वे आरोप सिद्ध नहीं किये जा सकते हैं। इसलिए प्रो. के.टी. शाह द्वारा पेश किये दोनों ही संशोधन नं० 1183 और 1186—इस दृष्टि से बड़े महत्वपूर्ण हैं क्योंकि उनका प्रभाव यह होता है कि भारत का प्रधान दोनों ही आगारों के मत के आधार पर हटाया जा सकेगा, न कि केवल एक आगार के मताधार पर अर्थात् केवल उस आगार के निर्णय के आधार पर जिसने दूसरे आगार द्वारा लगाये गये दोषारोपों का अनुसंधान किया हो। इसलिए मेरा मत तो यह है, श्रीमान्, कि इन दोनों ही संशोधनों को हमें किसी न किसी रूप में विधान में लिपिबद्ध कर देना चाहिए। जिस तरह कि दण्ड सम्बन्धी यानी फौज़दारी के मामलों में होता है कि पहले पुलिस मामले की जांच करती है और फिर उसे न्यायालय के सामने विचारार्थ पेश करती है, जहां अध्यक्षता करने वाला प्राधिकारी सर्वथा तटस्थ व्यक्ति रहता है, उसी तरह यहां भी यही होना चाहिए कि एक आगार द्वारा लगाये गये दोषारोपों का अनुसंधान हो तो कार्यवाही की अध्यक्षता भारत का प्रधान न्यायाधीश ही करे, क्योंकि वह न तो लोक-सभा का अध्यक्ष है और न राज्य-परिषद् का सभापति ही। मि. करीमुद्दीन के पहले संशोधन के सम्बन्ध में तो मेरा यह मत है।

प्रो. के.टी. शाह ने जो इस आशय का संशोधन पेश किया है कि प्रधान का निष्कासन दोनों ही आगारों के निर्णय के आधार पर होना चाहिए न कि केवल एक आगार के निर्णय पर, वह भी महत्वपूर्ण है। इसके पीछे जो सिद्धान्त है वह बहुत ही ठोस सिद्धान्त है और विधान में इसे अवश्य ही स्थान मिलना चाहिए।

इसके अलावा मित्र मि. करीमुद्दीन का एक और संशोधन है, जिसका नम्बर है 1187 जिसका आशय है कि प्राभियुक्त तथा पद से निष्कासित किये जाने पर

प्रधान पर यह निर्योग्यता लागू हो जायेगी कि वह भारतीय संघ के अधीनवर्ती किसी भी लाभ या सम्मान के स्थान के लिए न चुना जा सकेगा। मैं समझता हूं कि यह हमारे सार्वजनिक जीवन की शुद्धता से तथा हमारे जातीय आचरण से सम्बन्ध रखता है जिसकी कि अभी-अभी उस दिन हमने जयपुर में घोषणा की है। इसका यह अर्थ हुआ कि प्रधान.....।

माननीय मित्र मि. हुसैन मुस्करा रहे हैं, दबी हंसी हंस रहे हैं। मैं नहीं समझ पाता हूं कि वह क्यों हंस रहे हैं। उनका यह मतलब है कि जयपुर.....।

***श्री तजम्मुल हुसैनः** इसका यह अर्थ नहीं हुआ।

***श्री एच.वी. कामतः** इसका यह अर्थ नहीं हुआ, इसे समझाने का भार मैं मि. हुसैन पर ही छोड़ रहा हूं। मैं तो केवल यह पूछना चाहूंगा कि प्रधान जब संविधान के अतिक्रमण के लिए प्राभियुक्त होता है और दोनों सभायें उसे दोषी ठहरा कर निष्कासित कर देती हैं, तो क्या उस सूरत में भी हम यह कल्पना कर सकते हैं या सोच सकते हैं कि ऐसा उच्च पदस्थ व्यक्ति संसद् द्वारा पदच्युत किये जाने के बाद भी भारतीय संघ के अधीनवर्ती किसी सम्मान या विश्वास के पद के लिए पात्र हो सकेगा? मैं कहता हूं—और हज़ार बार कहता हूं कि वह पद के लिए कभी पात्र न हो सकेगा। ऐसे व्यक्ति को तो हम अपने देश में किसी पद पर न रहने देंगे, उसे कोई भी सम्मान या विश्वास का पद न देंगे। इसलिए संशोधन नं० 1187 का मैं पूर्ण समर्थन करता हूं।

पं. ठाकुरदास भार्गव (पूर्वी पंजाब : जनरल): जनाब प्रेसिडेंट साहब, इस सेक्शन 50 में जो अलफ़ाज हैं, मैं उनसे सहमत नहीं हूं। सबसे अव्वल दफा 50 में यह नुक्स है कि इसमें सिर्फ प्रेसिडेंट का जिक्र है, हालांकि चन्द ऐसे भी मौके होंगे जिसके अन्दर वायस-प्रेसिडेंट भी बतौर प्रेसिडेंट के काम करेगा। और इसके वास्ते कोई प्रोवीज़न नहीं है। ऐसे मौके पर जब वायलेशन कांस्टीट्यूशन की होगी इसकी जिम्मेदारी सरिहन वायस-प्रेसिडेंट की होगी और वह अपने फेल का जिम्मेदार होगा। इसलिए इस दफा में वायस-प्रेसिडेंट का भी जिक्र होना चाहिए था।

[पं. ठाकुरदास भार्गव]

"दूसरी कमी जो मैं पाता हूं वह यह है कि दफ़ा 50 में अलफ़ाज "वायलेशन ऑफ दी कांस्टीट्यूशन" (Violation of the Constitution) की कहीं तारीफ नहीं की गई है और यह वायलेशन ऑफ दी कांस्टीट्यूशन बहुत से तरीकों से हो सकता है। मसलन शैड्यूल नं० 4 में जो हिदायतें होंगी उनके खिलाफ़वर्ज़ी होने से दफ़ा 49 में जो जिम्मेदारी बज़रिये कस्म आयद हुई है, इसके पूरा न करने से और दीगर ग़रज़ पूरा न करने से इस अलफ़ाज के गैर मबहम और साफ अलफ़ाज में तारीफ न होने से यह अलफ़ाज बिल्कुल वेग (vague) हैं।

प्रेसिडेंट साहब, इंडियन युनियन के सबसे बड़े मुअज़्ज़िज़ अफ़सर होंगे और इसके अफाल के बारे में ऐसे 'वेग' (vague) अलफ़ाज की मौजूदगी से उनको बिला वजह भी 'हरास' (harass) किये जाने का इमकान है और यह अमर इसलिए सख्त अफसोसनाक है।

तीसरी चीज जो मैं नुक्स की पाता हूं कि ऐसे 'वेग' अलफ़ाज की मौजूदगी में यह शर्त कि महज़ 30 मैम्बरों की राय से नोटिस रिजोल्यूशन का दिया जाना काफी समझा जाये, यह मुनासिब सेफगार्ड नहीं है। मेरा यह ख्याल है कि एक बटा चार टोटल का नोटिस होना चाहिये। यह तरमीम निहायत जरूरी है और मैं इसको सपोर्ट करता हूं रिजोल्यूशन के पास होने के लिए कुल मेम्बरान के दो बटा तीन का होना मजीद सेफगार्ड भी जरूरी है। इन अमूर के पूरा होने पर दरवाजा तहकीकात खुल जाता है और तहकीकात दूसरे हाउस के हाथ में आ जाती है। दफ़ा 50 (3) की रू से या तो हाउस खुद तहकीकात करेगा या किसी और से तहकीकात करायेगा। अगर हाउस खुद तहकीकात करे, तो कोई माकूल वजह नहीं कि क्यों इस हाउस का प्रेसिडेंट बहैसियत प्रेसिडेंट के काम न करे। 'हाउस ऑफ दी पीपुल' का प्रेसिडेंट एक निहायत ही काबिल ऐतबार शख्स होता है और पार्टी बाज़ी से बाला होता है। उस पर पूरा ऐतबार किया जा सकता है कि वह बिला रू रियायत इन्साफ से काम लेगा। मिस्टर कामत साहब की दलील, कि कौन्सिल ऑफ स्टेट का प्रेसिडेंट चूंकि वायस-प्रेसिडेंट होगा, इसलिए वह इन्साफ से काम न लेगा, क्योंकि प्रेसिडेंट के हटाये जाने से उसको कुछ अर्से के लिए प्रेसिडेंट बनने का मौका मिलेगा, यानी अपील नहीं करे। क्योंकि अव्वल तो वह अकेला जज न होगा और दोयम ऐसा शख्स इतना

केरेक्टरलैस (characterless) न होगा कि इन्साफ़ को अपने हाथ से खो दे। इस जिम्न में एक निहायत जरूरी सवाल जो पैदा होता है वह यह है कि अगर तहकीकात का नतीजा यह हो कि चार्ज साबित है तो फिर दो-तिहाई मेम्बरान की मैजोरिटी जरूरी करार देने के मानी यह होंगे कि 'इम्पीचमेंट' (impeachment) का हक महज़ 'इल्यूजरी' (illusory) हो जायेगा। इन्साफ को इतने 'रिस्ट्रेक्शन' (restriction) से जकड़ना मुनासिब नहीं है। 'फ्रिवोलस एक्युजेशन्स' (frivolous accusations) के खिलाफ सेफगार्ड (अलिफ़) व (बे) में काफी ठीक है। लेकिन हाउस के तहकीकात का नतीजा असबात में होने से या सुप्रिम कोर्ट या किसी और बगैर अदालत का फैसला असबात में होने से शक्ल मामला तब्दील हो जाती है और ऐसे हालात में रिजोल्यूशन का 'कन्फर्मेशन' (confirmation) दो तिहाई मैजोरिटी से न चाहिए बल्कि महज मामूली मैजोरिटी काफी है। और अगर तहकीकात का नतीजा यह है कि चार्ज साबित नहीं हुआ तो फिर रिजोल्यूशन के पास न होने का सवाल भी पैदा नहीं होता। अगर इस सूरत में ही दो तिहाई मैजोरिटी रिजोल्यूशन असबात में पास करने का हक रखती है तो यह 'इन्वेस्टिगेटिंग हाउस' (investigating House) या अदालत मुकर्रर कर दे, यह हाउस की तौहीन है। ऐसे हालात में रिजोल्यूशन के पास करने का कोई मौका या जवाज़ कायम नहीं रहता है। अलबत्ता चार्ज के साबित होने पर हाउस को मैजोरिटी से फैसला तहकीकात असबाती पर कन्फर्मेशन करने का हक है। दफ़ा 50 (3) में तहकीकात के तरीका व मशीनरी के डैफिनिट न होने से और दफा 50 (4) में तहकीकात के नतीजा के डेफिनिट असर जाहिर न होने से यह सारी दफ़ा 50 गैर तसल्लीबख्श और 'वेग' (vague) रह जाती है। यह ठीक है कि इस दफ़ा का इस्तेमाल निहायत ही रेयर (rare) होगा लेकिन ताहम जब कभी इसको इस्तेमाल किया जायेगा, इसके जायज और मुनासिब इस्तेमाल में दिक्कत का सामना होगा। और मौजूदा शक्ल में इसका "इन्टरप्रिटेशन" (interpretation) मुश्किल होगा। मेरी गुजारिश यह है कि अगर इसमें यह तरामीम जिनका मैंने ऊपर इशारा किया है न की गईं तो दिक्कत का सामना होगा।

एक छोटा-सा प्वाइंट मैं और अर्ज करना चाहता हूं और वह यह है कि अगर किसी प्रेसिडेंट का वायलेशन इतना 'प्रोनाउंस्ड, एक्सप्रेस्ड प्रोनाउंस्ड' (pronounced, expressed pronounced) हो कि दोनों हाउसेज 'एक्यूज़र' (accuser) बनना चाहते हों तो किसको 'एक्यूजर' (accuser) समझा जायेगा और किसको 'इन्वेस्टिगेटिंग अथोरिटी' (investigating authority) समझा

[पं. ठाकुरदास भार्गव]

जायेगा? गोकि ऐसा 'प्राबेबिल' (probable) नहीं है। मैं अर्ज़ करूंगा कि ऐसा 'कन्टिन्जैन्सी' (contingency) के लिए इसके अन्दर कोई 'प्रोवीज़न' (provision) नहीं है। उसमें ऐसा प्रोवीज़न होना चाहिए कि ऐसी 'कन्टिन्जैंसी' (contingency) हाउस ऑफ पीपुल को एक्यूजर करार दिया जाये और हाउस ऑफ लाड्र्स को 'इन्वेस्टिगेटिंग अथोरिटी' करार दिया जाये। इन अलफ़ाज के साथ मैं दफ़ा 50 की ताईद करता हूं।

***श्री कुलधर चालिहा** (आसाम : जनरल): उपाध्यक्ष महोदय, मुझे खुशी है कि आपने सभा में जहां महत्त्वपूर्ण, अतिशय महत्त्वपूर्ण एवं सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण सदस्यों को बोलने का मौका दिया है वहां अब आप सभा के महत्त्वशून्य वर्ग को भी बोलने का मौका दे रहे हैं।

प्रधान पर प्राभियोग का लगाया जाना एक महत्त्वपूर्ण प्रश्न है और इस पर सभा को खूब सावधानी से विचार करना चाहिए। मि. करीमुद्दीन का संशोधन सर्वथा संगत, समुचित एवं पक्षपातशून्य दिखाई देता है। जब हम एक पदस्थ एवं मर्यादापूर्ण व्यक्ति के विरुद्ध मुकद्दमा चला रहे हैं तो यह जरूरी है कि कार्यवाही की अध्यक्षता एक ऐसा व्यक्ति करे जो दलगत आवेश से तथा पक्षपात से सर्वथा मुक्त हो और पूर्णत: तटस्थ दृष्टिकोण रख सके। ऐसा व्यक्ति सम्भवत: कौन हो सकता है? उसके लिए संधान-न्यायालय का प्रधान न्यायाधीश ही एक मात्र उपयुक्त व्यक्ति है। वह मुकद्दमे में सर्वथा पक्षपातशून्य दृष्टिकोण अपना सकेगा जो अध्यक्ष के लिए संभव नहीं है। जब हम अपने राज्य के सर्वोच्च पदस्थ प्राधिकारी के विरुद्ध मुकद्दमा चला रहे हों, तो यह जरूरी है कि कार्यवाही की अध्यक्षता एक ऐसा व्यक्ति करे जो पक्षपात से सर्वथा ऊपर हो और दल विशेष के मोह से सर्वथा स्वतन्त्र हो। अध्यक्ष कितना ही महान् व्यक्ति क्यों न हो, पर दल विशेष की ओर उसका झुकाव होगा ही और वह पक्षपात से ऊपर नहीं उठ सकता, जैसा कि आज हम सर्वत्र देख रहे हैं।

यह एक बहुत ही साधारण संशोधन है और इस पर पूर्णत: विचार करना होगा, इसलिए नहीं कि यह एक ऐसे दल या व्यक्ति की ओर से आया है जिससे हमारा कोई सम्बन्ध नहीं है। अगर इस मनोभाव से ही हम इस पर विचार करना जरूरी समझते हैं तो हम अपने ही प्रति अन्याय कर रहे हैं। हमें तो सभी संगत

संशोधनों पर विचार करना चाहिए, चाहे उसे उपस्थित किसी भी व्यक्ति ने किया हो। क्या ही अच्छा होता कि मैं पंडित भार्गव की वक्तृता को समझ पाता। वह ओजपूर्ण हिन्दुस्तानी में बोले हैं जो हम लोगों के लिए बोधगम्य नहीं है। किन्तु जो कुछ भी मैं समझ सका उससे उनका पक्ष कुछ जंचा नहीं। अध्यक्ष उस विषय पर समुचित बहस न करा पायेगा। इसके अलावा हो सकता है कि वह कानून-विशारद न हो। सम्भव है कि वह एक प्रख्यात सर्वप्रिय व्यक्ति हो पर हो सकता है कि वह सर्वोत्तम व्यक्ति न हो और यह भी हो सकता है कि बहुमत प्राप्त दल उसे बढ़ावा देता हो। इसलिए, किसी साक्ष्य को स्वीकार किया जाये या न किया जाये, उस सम्बन्ध में उसके क्या विचार होंगे, यह विशेषतः एक अनुमान की बात रहेगी और सम्भव है कि अफवाह या अन्य बातें उसके विचारों को प्रभावित करें। हो सकता है वह ऐसे किसी साक्ष्य की अनुमति दे दे जिससे उस उच्च व्यक्ति की प्रतिष्ठा में आघात पहुंचे। मेरा कहना है कि इस संशोधन पर हमें शान्त चित्त से विचार करना चाहिए। प्रधान पर लगाये गये दोषारोपों के अनुसंधान की कार्यवाही के लिए प्रधान न्यायाधीश को ही अध्यक्ष बनावें, क्योंकि प्रधान हमारे देश का एक बहुत ही प्रख्यात तथा उच्च नागरिक होगा। इसलिए नम्रतापूर्वक मैं यही सुझाव दूंगा कि आप इस मसले पर गौर करें और मि. करीमुद्दीन के संशोधन पर विचार करें।

अमेरिकन विधान में यही व्यवस्था रखी गई है कि प्रधान पर जब ऐसा मामला चलेगा तो वहां के प्रधान न्यायाधीश की अध्यक्षता में ही तत्संबंधी कार्यवाही होगी। वस्तुतः प्रेसिडेंट जानसन के मुकद्दमे में यही पाया गया कि अगर प्रधान न्यायाधीश की अध्यक्षता में मुकद्दमे की कार्यवाही न की गई होती, तो प्रेसिडेंट निष्कासित कर दिया गया होता। किन्तु प्रधान न्यायाधीश ने ऐसे साक्ष्यों की अनुमति दी कि जो बिल्कुल ठीक थे और इसीलिए प्रेसिडेंट निष्कासित होने से या पदच्युत होने से बच गया। इसी तरह हमें भी यही कोशिश करनी चाहिए कि इस सम्बन्ध में हमारे देश में समुचित न्याय हो सके।

आशा है हम लोगों की पार्टी इस सुन्दर एवं सुसंगत संशोधन पर विचार करेगी, जिसका समर्थन श्री कामत ने इतनी योग्यता से किया है।

***श्री बी. दास** (उड़ीसा : जनरल): उपाध्यक्ष महोदय, बहुत निराशा के साथ मैं अपनी बात कहने जा रहा हूं। हम कोशिश तो इस बात की कर रहे हैं कि एक गणतन्त्रात्मक प्रधान की व्यवस्था करें पर तरह-तरह के सन्देह हमारे मन में उठ रहे हैं और यह सभा संदिग्ध हो रही है। विश्राम के बाद, जयपुर से लौटने के पश्चात् सदस्यगण बहुत कुछ दब गये हैं। वह अपने मन की बात साफ-साफ और खुल कर नहीं कहते हैं। फिर भी वह कतिपय संशोधन, जिन्हें कि ऐसे सदस्यों ने पेश किये हैं जिनसे मेरा मतैक्य नहीं है, तथा वह कई संशोधन जिनकी सूचना तो आई पर जो पेश किये गये, यह साफ़ जाहिर करते हैं कि सदस्यों के मन में कुछ सन्देह है।

***उपाध्यक्षः** मिस्टर दास, क्या जयपुर का उल्लेख करना आपके लिए कुछ जरूरी ही है? सदस्यों ने बार-बार जयपुर की चर्चा की है। ये नहीं समझता कि इस सभा की कार्यवाही से जयपुर का क्या सम्बन्ध है।

***श्री बी. दासः** मुझे नहीं पता कि सदस्य-वृन्द क्यों इतना दब गये हैं। प्रधान के सम्बन्ध में, 47 से 50 तक के अनुच्छेद बहुत ही महत्त्वपूर्ण हैं। मैं पूछता हूं कि हम लोग किसी गणतंत्रात्मक प्रधान की व्यवस्था करने जा रहे हैं या किसी विभीषिका की? अनुच्छेद 50 को लेकर इस समय हम अपने उन सन्देहों पर बहस-मुबाहिसा कर रहे हैं जो प्रधान के बारे में हमारे मन में उठ रहे हैं और हम यह सोच रहे हैं कि किस तरह विधान के अतिक्रमण के लिए प्रधान को हम प्राभियुक्त करें। इससे तो यही प्रकट होता है कि हम गणतंत्रात्मक प्रधान की व्यवस्था नहीं कर रहे हैं। उन कतिपय संशोधनों के द्वारा, जिनमें से बहुत तो उपस्थित किये गये हैं और बहुत से उपस्थित ही नहीं किए गए हैं, बहुत से सदस्य यह चाहते हैं कि प्रधान की शक्ति को और नियंत्रित कर दिया जाये। इस सम्बन्ध में विचार करते-करते हम सब सुदूरवर्ती अतीत की ओर पहुंच गये और हमें नेपोलियन की याद आ गई। वह एक साधारण व्यक्ति था; प्रेसिडेंट चुना गया और आगे चल कर वह निरंकुश सम्राट बन बैठा। दक्षिणी अमेरिका के प्रधानों की याद अभी पुरानी नहीं हुई। वे लोग अपने तथा कथित गणतंत्रों में, जिनकी कि दक्षिणी अमेरिका में भरमार है, एकाएक निरंकुश तानाशाह बन बैठे। अतः दुर्भाग्य से स्थिति यह है कि हमें यह देखना होगा कि हम अपने प्रधान को ऐसे अधिकार तो नहीं दे रहे हैं कि मनमानी कर सकें। इसमें शक नहीं कि उसको

परामर्श देने के लिए एक गणतंत्रात्मक मंत्रिमण्डल रहेगा पर क्या हमारे लिए यह कल्याणकर होगा कि हम उसे मनमानी करने की शक्तियां दे दें? मानवी कमज़ोरियों के रहते हुए क्या यह संभव होगा कि हमारा गणतंत्रात्मक प्रधान सदा गणतंत्रात्मक ही बना रहे और निरंकुश या स्वेच्छाचारी न हो जाय? जो संशोधन पेश नहीं किये गये हैं उनसे व्यक्त है कि हम मानव प्राणी हैं और हमें यह सन्देह होता है कि कहीं हमारा गणतंत्रीय प्रधान स्वेच्छाचारी न बन जाय। बहुत से सदस्य यह चाहते हैं कि प्रधान कम उम्र का—35 का—न हो बल्कि वह वयोवृद्ध राजनीतिज्ञ हो। मैंने ही अपने संशोधन नं० 1185 को यही आशा करके नहीं पेश किया कि हमारा प्रधान सदा अपने को सज्जन पुरुष सिद्ध करेगा। हमारे संशोधन का यह आशय है कि प्रधान के पद से अवकाश पाने के बाद कोई भी प्रधान भारतीय संघ के अधीनवर्ती किसी पद के लिए या किसी राज्य का शासक (गवर्नर) बनने के लिए प्रयास न करेगा। आखिर यह दौर्बल्य हमारे वयोवृद्ध राजनीतिज्ञों में क्यों प्रकट हो? क्यों वह राजदूत या शासक बनने की कोशिश करे? ये विचार हमारे दिमाग में आज उथल-पुथल मचा रहे हैं। यह सिद्ध कर दिखाना हमारे प्रधान का काम है कि वह इन प्रलोभनों से ऊपर है।

अभी निकटवर्ती अतीत काल में जब यहां अंग्रेज़ों की हुकूमत थी, हमें ऐसे सन्देहास्पद आचरणों का अनुभव मिला है। मद्रास के एक गवर्नर अवकाशप्राप्ति के पश्चात् यहां गवर्नर जनरल होकर आये और उनकी पत्नी इसे बहुमूल्य उपहार तथा परिलाभों की प्राप्ति का एक अच्छा साधन समझती थी। हमें इस पर विचार करना होगा कि 41-51 तक के अनुच्छेदों के द्वारा हम जिस प्रजातंत्रीय प्रधान की व्यवस्था कर रहे हैं, वह आगे चल कर स्वेच्छाचारी तो न बन जायेगा और उपहार और अन्य बहुमूल्य वस्तुएं तो स्वीकार न करने लगेगा। इस तरह मिलने वाले उपहार साधारण लागत की चीज़ें नहीं होतीं बल्कि इसमें जवाहरात तथा अन्य वस्तुएं रहती हैं, जिनकी कीमत लाखों और करोड़ों तक पहुंचती हैं। हमें यह देखना होगा कि हमारा प्रधान और उसकी पत्नी, उसकी कन्या, उसकी बहुएं ऐसे उपहार न ले सकें। मैं चाहता हूं कि मेरे सुयोग्य मित्र डॉ. अम्बेडकर विधान में एक ऐसा प्रावधान रखें जिससे हमारा प्रधान तथा उसका परिवार, उस अवधि के अन्दर जब तक कि वह दिल्ली के सिंहासन पर विराजमान है, जो

[श्री बी. दास]

कुछ उपहार पाये वह सब राष्ट्र की चीज़ हो, राज्य की सम्पत्ति हो। ऐसे उपहारों का लाभ प्रधान या उसके आश्रितों को नहीं मिलना चाहिए।

मैंने आपसे यहां बोलने की अनुमति ली, वह केवल इसलिए ली, श्रीमान्, कि बहुत से सदस्यों की भावनाओं को मैं व्यक्त कर दूं। हम सभी मानवप्राणी हैं। हम न ठक्कर बाबा हैं, न महात्मा गांधी हैं और न उपाध्यक्ष महोदय, हम आपके ही समान ऊंचे मानव हैं। मेरा मन सन्देहशील है। अपने तमाम राजनैतिक जीवनकाल में मैं सदा ही प्रत्येक अंग्रेज के प्रति सन्देह करता रहा हूं। मैं उन पर भी सन्देह करता रहा हूं जिनकी शिक्षा-दीक्षा अंग्रेजी परम्परा के अनुसार हुई है। इसलिए मैं यह जानना चाहता हूं कि उन सन्देहों को दूर करने के लिए हम क्या-क्या व्यवस्था कर रहे हैं। यहां सभा-भवन में जो वक्तृतायें हुई हैं उनसे व्यक्त होता है कि हमें अपने प्रधान के सम्बन्ध में सन्देह हैं। ऐसी हालत में उन सभी बातों को क्यों न स्पष्ट कर दिया जाये? केवल इस आधार पर कि गांधी-विचारधारा की सम्यक रूप से शिक्षा पाया हुआ कोई प्रधान हमें मिल सकता है, हम यह आशा तो नहीं कर सकते कि दूसरे भी गवर्नरी पाने की या अन्य पद पाने की कोशिश न करेंगे।

श्री तजम्मुल हुसैनः मिस्टर वाइस प्रेसिडेंट, मेरे लायक दोस्त मि. मोहम्मद ताहिर ने तरमीम नं० 1178 पेश की है जिसमें·····।

***उपाध्यक्षः** हमारे दाक्षिणात्य मित्रों ने बार-बार हमसे यह कहा है कि इतनी प्रभावपूर्ण भाषा को वे समझ नहीं सकते हैं। आपको यह स्वतंत्रता है कि जिस भाषा में भी चाहें बोले, किन्तु अगर आप उनके मत पर असर डालना चाहते हैं तो आपको अंग्रेजी में ही बोलना होगा। किस भाषा में आप बोलें यह तय करना आपका काम है।

***श्री तजम्मुल हुसैनः** मेरे मित्र पंडित भार्गव अभी हिन्दुस्तानी में बोले हैं इसलिए मैं सभा को यह दिखला देना चाहता था कि मैं भी दिल्ली निवासियों के बराबर ही अपनी भाषा में बोलने में समर्थ हूं, यद्यपि एक सुदूरवर्ती प्रदेश बिहार से मैं आया हूं।

***उपाध्यक्षः** यह पूर्वी पंजाब के हैं।

***श्री तजम्मुल हुसैनः** पंजाबी जुबान हिन्दुस्तानी नहीं कही जाती। खैर, मैं अंग्रेजी में बोलूंगा।

मिस्टर ताहिर ने इस अनुच्छेद के सम्बन्ध में एक संशोधन पेश किया है। अनुच्छेद में कहा गया है कि जब भी संसद् यह चाहेगी कि भारतीय गणतंत्र के प्रधान के विरुद्ध निन्दा का प्रस्ताव पास किया जाये तो उसे उस प्रस्ताव को, उपस्थित तथा मतदान करने वाले सदस्यों की दो-तिहाई से अन्यून बहुमत द्वारा पास करना होगा। इस सम्बन्ध में मिस्टर ताहिर का कहना यह है कि यह व्यवस्था ठीक नहीं है। गणतंत्र ऐसा न होना चाहिये। वहां तो साधारण बहुमत से किया हुआ निर्णय ही मान्य होना चाहिए। मैं उनके इस संशोधन का विरोध करने के लिए खड़ा हुआ हूं।

अगर भारतीय गणतंत्र का प्रधान एक वोट के बहुमत से अथवा अध्यक्षता करने वाले व्यक्ति के निर्णायक मत से हटाया जाता है तो आप जानते हैं, क्या होगा? उस सूरत में प्रधान सभा में जिस दल का बहुमत होगा उसके हाथ की वह कठपुतली बन जायगा। हम अपने प्रधान को इस स्थिति में नहीं आने देना चाहते। हम ऐसा प्रधान नहीं चाहते हैं जो बहुमत प्राप्त दल की चाटुकारिता करे, चाहे अधिकारारूढ़ दल कांग्रेस हो या समाजवादी दल हो। हम नहीं चाहते कि प्रधान बहुमत प्राप्त दल का मुंह देखा करे। प्रधान चुन लेने पर उसे पूर्णतः पक्षपातशून्य होकर अपना काम करने दीजिए और ऐसा न कीजिए कि वह पार्टी से कृपा की भीख मांगे। इसलिए मैं मूल अनुच्छेद का समर्थन करता हूं। अगर प्रधान पर प्राभियोग लगाना है तो उपस्थित सदस्यों के दो-तिहाई के बहुमत से ही उसे प्राभियुक्त कीजिए।

अब, श्रीमान्, संशोधन नं० 1183 को मैं लेता हूं जिसे आदरणीय मित्र प्रो. के. टी. शाह ने पेश किया है। वह चाहते हैं कि अनुच्छेद 50 के खण्ड (4) में “such resolution shall” शब्दों के बाद “be placed before the People's House and if adopted by the latter, shall” ये शब्द जोड़ दिये जायं। अनुच्छेद 50 में उस जाप्ते का उल्लेख किया गया है, जिसके अनुसार प्रधान प्राभियुक्त किया जा सकेगा। हमारे दो आगार हैं, एक तो उत्तर आगार और दूसरा अवर आगार अर्थात् राज्य-परिषद् और लोक-सभा। अनुच्छेद 50 में कहा

[श्री तजम्मुल हुसैन]

गया है कि कोई भी आगार प्रधान के विरुद्ध दोषारोप ला सकता है और एक आगार—मान लीजिए कि लोक-सभा—प्रधान के विरुद्ध दोषारोप करता है, उसके विरुद्ध कतिपय अभियोग लगाता है तो दूसरा आगार, यानी राज्य-परिषद् उसका अनुसंधान करेगा। इसका मतलब यह हुआ कि दूसरा आगार न्यायाधीश के रूप में काम करेगा और जिस आगार ने दोषारोप किया है, वह केवल फ़रियादी या अभियोक्ता के रूप में ही रहेगा। कानून-विज्ञान के अनुसार अभियोक्ता न्यायाधीश का काम नहीं कर सकता। इसी सिद्धान्त को लेकर तो अब तक हम इस बात के लिए लड़ते आये हैं कि न्याय-प्रकार्य को अधिशासी प्रकार्य से सर्वथा पृथक् रखना चाहिए। ज्यों ही ऐसा करना शक्य होगा हम ऐसा कर देंगे। अंग्रेजी हुकूमत को इसी में सुविधा थी कि अभियोक्ता तथा न्यायाधीश दोनों ही काम वह खुद करे। किन्तु अब जब हम प्रजातन्त्रात्मक राज्य बनाने जा रहे हैं और भारतवर्ष स्वतन्त्र हो गया है, अभियोक्ता न्यायाधीश का काम नहीं कर सकता। इसलिए मैं आदरणीय मित्र प्रो. के. टी. शाह के संशोधन का विरोध करता हूं।

दूसरा संशोधन यह है नं० 1185 जिसे मि. नजीरुद्दीन अहमद ने पेश किया है। उनका कहना है कि प्रधान उसी समय से प्रधान के पद से अलग हो जायेगा, जबसे कि दोषारोप को सिद्ध घोषित करने वाला प्रस्ताव पास हो जाता है, न कि उस दिन से जिस दिन कि प्रस्ताव पास होता है। यह तो एक सरल और समुचित बात दिखाई देती है। मान लीजिए कि दोषारोप के अनुसंधान करने वाली सभा की बैठक 10 बजे सवेरे हुई और निन्दा का प्रस्ताव पास हुआ 12 बजे दिन को। वर्तमान खण्ड (4) के अनुसार प्रधान उस तारीख के प्रारम्भ से ही यानी 12 बजे रात से प्रधान पद से अलग हो जायेगा। इस संशोधन के अनुसार यह होगा कि प्रस्ताव के पास होते ही स्वत: प्रधान अपने पद से च्युत समझा जायेगा। यह तो, मेरी समझ से तर्कसंगत बात है और हमें इसे स्वीकार करना चाहिए। अब मैं संशोधन नं० 1186 को लेता हूं जिसे प्रो. के.टी. शाह ने पेश किया है और जिसमें कहा गया है कि खण्ड (4) के अन्त में “by both Houses of Parliament” ये शब्द जोड़ दिये जायें। वह चाहते हैं कि जब एक आगार भारतीय संघ के प्रधान के विरुद्ध दोषारोप का पुरोधान करे तो मुकद्दमे की

सुनवाई दोनों ही आगार करें। मैं अपने तर्कों को दुहराना नहीं चाहता। वह यह चाहते हैं कि अभियोक्ता और न्यायाधीश दोनों ही मिलकर उस मामले में निर्णय दें। चूंकि अभियोक्ता न्यायाधीश नहीं हो सकता, इसलिए मैं इस संशोधन का विरोध करता हूं।

अब आता है संशोधन नं० 1187, जिसे माननीय मित्र मि. काजी सैयद करीमुद्दीन ने पेश किया है। इस अनुच्छेद में कहीं भी इस बात का कोई उल्लेख नहीं है कि प्रधान के विरुद्ध निन्दा का प्रस्ताव पास हो जाने पर जब वह प्रधान-पद से निष्कासित हो जायेगा, तो उसका क्या होगा। होना यह चाहिए कि निष्कासित होने के बाद वह किसी भी पद के लिये पात्र न रह जाये। किन्तु इस बात को हमें विधान में भी लिपिबद्ध कर देना होगा। मेरी समझ से मि. करीमुद्दीन का संशोधन सर्वथा समुचित है और इसलिए मैं इसका समर्थन करता हूं। निष्कासित किये जाने पर प्रधान पर यह निर्योग्यता लागू हो जायेगी कि वह भारतीय संघ के अधीनवर्ती किसी सम्मान या विश्वास अथवा लाभ के पद को न धारण कर सकेगा। इसमें शक नहीं कि ऐसा ही होगा, पर मैं चाहता हूं कि विधान में यह बात रख दी जाये।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** उपाध्यक्ष महोदय, इस अनुच्छेद के सम्बन्ध में जो कतिपय संशोधन पेश किये गये हैं, उनमें से केवल दो को मैं स्वीकार कर सकता हूं। एक तो संशोधन नं० 1158 को, जिसे माननीय मित्र श्री गुप्ते ने पेश किया है, जिसमें कहा गया है कि प्रधान के प्राभियोग के सम्बन्ध में विचारार्थ जो प्रस्ताव आवे, उसके लिए 14 दिनों की पूर्व सूचना होनी चाहिए। दूसरा संशोधन है नं० 1160 का, जिसे माननीय मित्र श्री देव ने पेश किया है। मैं इसे भी श्री टी.टी. कृष्णमाचारी द्वारा संशोधित रूप में स्वीकार करने के लिए तैयार हूं। मेरा ख्याल है कि मूल अनुच्छेद में जो वह व्यवस्था है कि 30 सदस्यों के हस्ताक्षरों से आई हुई सूचना के बाद ही दोषारोप सम्बन्धी संकल्प पर विचार हो, इसमें 30 की संख्या पर्याप्त नहीं है। मेरा मत है कि संशोधन द्वारा जिस परिवर्तन का सुझाव दिया गया है, उससे व्यवस्था और उत्तम हो जायेगी और इसलिए मैं इसे मान लेता हूं।

[माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर]

अब मैं दूसरे संशोधनों को लेता हूं। मुझे दु:ख है कि मैं इन्हें स्वीकार करने में असमर्थ हूं। पर इनके सम्बन्ध में उत्तर देना मेरे लिए जरूरी है। जिन संशोधनों के सम्बन्ध में जवाब देना जरूरी है वह है नं० 1151, 1171, 1173, 1176 और 1186 के, जिनको प्रो. के.टी. शाह ने पेश किया है। प्रो. के.टी. शाह ने जो संशोधन पेश किये हैं, श्रीमान्, वह दो बातों के सम्बन्ध में हैं। एक तो प्राभियोग-सम्बन्धी योजना के सम्बन्ध में, जो कि विधान के मसौदे में रखी गई है, और दूसरे इस सम्बन्ध में, कि दोषारोप का अनुसंधान करने वाले आगार के सामने उपस्थित होने का तथा वकील के जरिये अपना बचाव करने का प्रधान को अधिकार है। दूसरी बात के सम्बन्ध में प्रो. के.टी. शाह का जो संशोधन है, मैं नहीं समझता कि उसकी कोई भी जरूरत है। प्रो. के.टी. शाह ने इस सम्बन्ध में जिस अनुच्छेद का उल्लेख किया है वह है शायद 50(3) या 50(4)। उसमें न केवल दोषारोप का अनुसंधान करने वाले आगार के सामने उपस्थित होने का बल्कि वकील के द्वारा अपना प्रतिनिधान कराने का प्रधान को अधिकार दिया गया है। प्रो. के.टी. शाह ने इतना ही किया है कि इस अनुच्छेद के खण्ड (3) के कुछ अंश को अलग करके खण्ड (3)(क) के रूप में रख दिया है ताकि यह एक अलग स्वतंत्र खण्ड हो जाये। मैं नहीं समझता, जो उपाय उन्होंने अपनाया है, उसकी कोई भी जरूरत है।

अब मैं दूसरी बात को लेता हूं, यानी मसौदे में दी हुई प्राभियोग-सम्बन्धी योजना में उन्होंने जो त्रुटियां बताई हैं उनको लेता हूं। पेश्तर इसके कि इस सम्बन्ध में जवाब यह अच्छा होगा कि मसौदे में प्राभियोग-सम्बन्धी योजना के बारे में जो प्रावधान रखे गये हैं, मैं उनकी एक स्पष्ट रूपरेखा सभा के सामने उपस्थित कर दूं। जो कोई भी इस अनुच्छेद का विश्लेषण करेगा, उसे ज्ञात हो जायगा कि इसमें चार बातें रखी गई हैं। पहली बात तो यह कि प्राभियोग-सम्बन्धी प्रस्ताव किसी आगार में—लोक-सभा में या राज्य-परिषद् में—उपस्थित किया जा सकता है। दूसरी बात यह कि ऐसे प्रस्ताव के लिए एक अपेक्षित संख्यक सदस्यों का समर्थन आवश्यक है। तीसरी बात यह कि जिस आगार ने दोषारोप सम्बन्धी

प्रस्ताव को पास किया है, उसी आगार को दोषारोप के अनुसंधान का अधिकार न होगा। और चौथी बात यह कि जिस आगार ने दोषारोप का अनुसंधान किया है, वह अगर प्रधान को दोषी पाता है तो दोष को सिद्ध घोषित करने वाला प्रस्ताव वहां दो तिहाई के बहुमत से स्वीकृत होना चाहिए।

ये चार बातें हैं, जो इस अनुच्छेद विशेष में रखी गई हैं। प्रो. शाह का कहना यह है कि प्रधान के प्राभियोग के सम्बन्ध में उत्तर-आगार को सर्वथा मौन रहना चाहिए। प्रधान पर प्राभियोग लगाने का, दोषारोप के अनुसंधान का तथा उस सम्बन्ध में फैसला देने का अधिकार एकमात्र लोक-सभा को ही प्राप्त होना चाहिए। मैं उन कारणों को समझने में सर्वथा असमर्थ हूं जिनके आधार पर प्रो. शाह का यह ख्याल है कि अवर आगार यानी लोक-सभा को कुछ खास हक है कि इन सब बातों की शक्ति उसी में सन्निहित रहे। आखिर प्रधान पर जो प्राभियोग लगाया या जो मुकद्दमा चलाया जायेगा, वह उसी उद्देश्य से तो कि जो भी व्यक्ति प्रधान पद पर आसीन हो वह उस पद की मर्यादा को, उसके गौरव तथा सम्मान को सदा सुरक्षित रखे। स्पष्ट है कि उस पद की मर्यादा, उसका गौरव और सम्मान एक ऐसी बात नहीं है कि जिसका सम्बन्ध केवल लोक-सभा से ही हो। उत्तर आगार को भी इन सब बातों से उतना ही सम्बन्ध है जितना कि लोक-सभा को। जैसा मैं कह चुका हूं, उत्तर आगार को भी इस बात की कि प्रधान विधान के प्रावधानों के अनुसार चले, उतनी ही फ़्रिक होगी, जितनी कि लोक-सभा को। इसलिए मैं नहीं समझ पाता कि क्यों उत्तर आगार को भी यह अधिकार न दिया जाये कि प्रधान के विरुद्ध अगर प्रतिकूल आचरण करने का कोई प्राभियोग लगाया जाये, तो वह भी उसका अनुसंधान कर सकता है और मुकद्दमे की सुनवाई कर सकता है। इस अधिकार से उसे ही क्यों वंचित किया जाये? उसे भी तो आखिर इन बातों से उतना ही सम्बन्ध है जितना कि लोक-सभा को है। अपने मन्तव्य के ठीक होने का प्रो. के.टी. शाह को इतना विश्वास था कि अपना पक्ष प्रतिपादन करते हुए आपने यहां तक कह दिया कि उनके इस संशोधन का विरोध करने का साहस केवल ऐसे ही लोग कर सकते हैं, जो गुलामों की तरह दूसरे विधानों की नकल करते आये हैं। मसौदा-समिति

[माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर]

पर आपने जो आक्षेप किया है, मैं उसकी चिन्ता नहीं करता। जैसा कि मैं अपने आरम्भिक भाषण में कह चुका हूं। मसौदा-समिति ने जिस विधान में यह देखा है कि उसके प्रावधान हम लोगों के द्वारा बनाई जाने वाली व्यवस्थाओं से अच्छे हैं, उसने देश-हित के ख्याल से उन प्रावधानों को तुरन्त अपना लिया है। ऐसा करने में वह कभी भी डरी नहीं। प्रो. के.टी. शाह शायद यह भूल जाते हैं कि यहां अगर कोई भी ऐसा व्यक्ति है, जहां तक कि मैं देख पाता हूं, जिसने गुलामों की तरह अमेरिकन विधान की ही नकल करने की आदत डाल रखी है तो वह व्यक्ति मेरे विचार से सिवाय प्रो. शाह के और कोई नहीं है। (*हंसी*) मेरा ख्याल है कि अमेरिकन विधान में अधिशासन-सम्बन्धी जो योजना है ठीक उसी योजना को मय कामा और फुलस्टाप के प्रो. के.टी. शाह ने उठा लिया था और उसी का यहां संशोधन रखा था, और जब मूल बात में उनको सफलता न मिली तो अमेरिकन विधान के प्रति उनकी आस्था और भी बढ़ गई, जिसके फलस्वरूप वह ऐसे संशोधनों पर जोर देते आ रहे हैं, जिन्हें वह खुद भी जानते हैं कि, वह आनुषंगिक हैं और उनमें सार की कोई बात नहीं है। इसलिए मसौदा-समिति पर जो आक्षेप उन्होंने किया है उसकी मुझे चिन्ता नहीं है।

दूसरी बात प्रो. शाह विधान में रखना चाहते हैं, वह यह है कि प्रधान के विरुद्ध लगाये गये दोषारोप के सम्बन्ध में दोनों ही आगारों का मत लिया जाना चाहिए। मसौदे में जो मुख्य योजना है, उसे मंजूर करना आपने स्पष्टत: तय कर लिया है। आप चाहते यह हैं कि दोषारोप का अनुसंधान करने वाला आगार अनुसंधान के फलस्वरूप अगर किसी निर्णय पर पहुंच जाय तो उस निर्णय पर तब तक अमल न होना चाहिए जब तक कि दूसरा आगार भी उसे स्वीकार न कर ले। उदाहरण के तौर पर आपसे पूछता हूं कि जूरी अगर किसी मामले का अनुसंधान करके किसी निर्णय पर पहुंचते हैं तो क्यों वह निर्णय फिर किसी दूसरे जूरी के सामने रखा जाये? यहां अनुसंधान के फलस्वरूप निर्णय देने वाला आगार जूरी की ही स्थिति में है और मेरी समझ में नहीं आता कि उसके निर्णय को क्यों फिर दूसरे आगार के सामने रखा जाये। ऐसे सिद्धान्त या ऐसे उदाहरण की बात मैंने आज तक नहीं सुनी। मान लीजिए कि दूसरा आगार उस निर्णय को नहीं स्वीकार करता है जिसे कि अनुसंधान करने वाले आगार ने किया है। ऐसी सूरत में क्या किया जायेगा? स्पष्ट है कि ऐसी सूरत में गतिरोध की स्थिति पैदा हो

जायगी। मेरी समझ से प्रो. के.टी. शाह ने इस गतिरोध का कोई उपाय नहीं बतलाया है। इन कारणों से प्रो. के.टी. शाह के किसी भी संशोधन को मानने में असमर्थ हूं।

एक दूसरा है, जिसके सम्बन्ध में मुझे जवाब देना होगा क्योंकि यह प्रो. के. टी. शाह के संशोधन से मिलता-जुलता है। यह है संशोधन नं० 1178 जिसे माननीय मित्र मि. ताहिर ने पेश किया है। उनका कहना है कि विधान के अतिक्रमण सम्बन्धी दोष को सिद्ध घोषित करने वाला जो प्रस्ताव हो, उसके लिए यह नहीं होना चाहिए कि वह दो-तिहाई के बहुमत से पास हो। उनका ख्याल है कि साधारण बहुमत ही इसके लिए पर्याप्त है। मैं समझता हूं कि माननीय मित्र मि. ताहिर ने उस तथ्य पर पर्याप्त ध्यान नहीं दिया है कि प्राभियोग सम्बन्धी प्रस्ताव में और अविश्वास के प्रस्ताव में बड़ा अन्तर है। अविश्वास के प्रस्ताव में कोई लज्जा या नैतिक नीचता का प्रश्न नहीं सन्निहित रहता। उसका केवल इतना ही अर्थ होता है कि पार्टी अथवा सभा हकूमत की नीति को नहीं मानती है। अविश्वास के प्रस्ताव में, इसके अतिरिक्त और कोई निन्दा की बात नहीं है। किन्तु प्राभियोग सम्बन्धी प्रस्ताव का आधार ही बिल्कुल भिन्न होता है। यदि प्राभियोग सम्बन्धी प्रस्ताव के आधार पर कोई व्यक्ति दोषी घोषित किया जाता है तो इससे उसका सार्वजनिक जीवन ही प्राय: खत्म हो जाता है। इन दोनों में इतना बड़ा अन्तर है। इसलिए मेरी समझ में वांछनीय यही है कि जिस प्रस्ताव का परिणाम इतना गम्भीर होता है उसको केवल साधारण बहुमत द्वारा स्वीकृत होने की व्यवस्था न की जाये। इसी अन्तर के कारण ही मसौदा-समिति ने यह प्रावधान किया है कि दोषी घोषित करने वाला प्रस्ताव दो-तिहाई के बहुमत से पास होना चाहिए।

अब, श्रीमान्, मैं माननीय मित्र काजी सैयद करीमुद्दीन के संशोधन को लेता हूं। उनके संशोधन नं० 1152 पर मैं पहले विचार करता हूं। इस संशोधन के द्वारा वह यह चाहते हैं कि "violation of the Constitution" (विधान के अतिक्रमण) शब्दों के बाद "treason, bribery and other high crimes and misdemeanours" (राजद्रोह, घूस तथा अन्य गम्भीर अपराधों और दुष्कृत्यों) ये शब्द रखे जायें। "विधान का अतिक्रमण" यह पदसंहति बहुत ही व्यापक है और इसमें हम राजद्रोह, घूस तथा अन्य गम्भीर अपराधों और दुष्कृत्यों को शामिल कर सकते हैं। राजद्रोह करना, अवश्य ही विधान का अतिक्रमण करना है। घूस लेना भी विधान का अतिक्रमण करना है क्योंकि इससे वह शपथ

[माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर]

भंग होती है जो प्रधान द्वारा ली जाती है। जहां तक अन्य अपराधों का सम्बन्ध है सदस्यों को मालूम होना चाहिए कि ऐसे अपराधों के सम्बन्ध में प्रधान के प्राभियोग के लिए एक और ही व्यवस्था की गई है। इसलिए मेरी राय में इन शब्दों को यहां जोड़ना अनावश्यक है। 'विधान का अतिक्रमण' इस पदसंहति के अन्दर ये सभी बातें आ जाती हैं।

उनका दूसरा संशोधन है नं० 1170 का, जिसके द्वारा वह यह प्रावधान करना चाहते हैं, दोषारोप के अनुसंधान की कार्यवाही प्रधान न्यायाधीश की अध्यक्षता में हो। उनके इस मन्तव्य से मेरा कोई विरोध नहीं है कि प्राभियोग-सम्बन्धी मामले के अनुसंधान का काम जिस आगार को भी करना पड़े, अनुसंधान सम्बन्धी कार्यवाही का संचालन पूर्णत: अदालती ढंग पर होना चाहिए और दण्ड-प्रणाली-संहिता तथा साक्ष्य-अधिनियम में दिये गये प्रावधानों का इस सम्बन्ध में पालन होना चाहिए। जैसा कि मैं कह चुका हूं मुझे उनके मन्तव्य से कोई विरोध नहीं है बल्कि मैं उनसे सहमत हूं। किन्तु इस सम्बन्ध में एक ही बात है जिस पर हमें विचार कर लेना चाहिए। क्या इस मसले को दोनों आगारों पर ही छोड़ दें कि वहीं उसके बारे में जाप्ते के कायदे बना लें या यह अच्छा होगा कि विधान में इन सभी बातों को स्पष्टत: लिपिबद्ध कर दिया जाये। माननीय मित्र मि. करीमुद्दीन देखेंगे कि प्रस्तुत अनुच्छेद के उपखण्ड (3) में यह प्रावधान किया गया है कि एक आगार दोषारोप का अनुसंधान करेगा। इसलिए स्पष्ट है कि जाप्ते के नियम बनाने में दोनों ही आगारों को उसमें एक धारा प्राभियोग सम्बन्धी प्रणाली के सम्बन्ध में रखना ही होगा। यह इसलिए करना होगा क्योंकि हो सकता है किसी समय दोषारोप का पुरोधान उत्तर आगार करे और लोक-सभा उसका अनुसंधान करे और कभी इसके विपरीत हो। इसलिए दोनों ही आगारों को प्राभियोग संबंधी मामले के लिए एक धारा बनानी ही होगी, जिसके जाप्ते के नियमों का उल्लेख होगा। ऐसी हालत में विधान-मण्डल जाप्ते के नियमों में यह बात रख सकता है कि जिस आगार में भी अनुसंधान की कार्यवाही होगी, वह प्रधान न्यायाधीश की अध्यक्षता में होगी अथवा अन्य किसी न्यायालय संबंधी प्राधिकारी की अध्यक्षता में होगी। इसलिए मेरी समझ से मि. करीमुद्दीन साहब

का मतलब पूरा हो जायेगा, अगर दोनों आगारों के लिए जाप्ते के जो नियम बने उसमें वह बात आ जाय जिसका मैंने यहां उल्लेख किया है। इसलिए इस प्रावधान की कोई जरूरत नहीं रह जाती है।

अब मैं उनके तीसरे संशोधन को लेता हूं, जो 1187 नं० का है। वह चाहते हैं कि विधान में निर्योग्यताओं का उल्लेख हो जाना चाहिए, जो प्रधान के विरुद्ध लगाये गये दोषारोप के सिद्ध होने पर ही उन पर लागू होंगी। जो भाषा उन्होंने अपने संशोधन में व्यवहृत की है वह मैं समझता हूं कि उन्होंने अमेरिकन विधान से ली है। इस सम्बन्ध में मेरा मत यह है। जहां तक कि विधान-मण्डल की सदस्यता का सवाल है, जैसा कि मैं पहले भी एक अवसर पर बता चुका हूं, यह बात अनुच्छेद 83 के अन्तर्गत आ जाती है जिसमें विधान-मण्डल संबंधी सदस्यता की निर्योग्यताएं लिपिबद्ध की गई हैं। जैसा कि मैंने उस मौके पर कहा था, संसद् के लिए यह सर्वथा शक्य होगा कि जब वह अतिरिक्त निर्योग्यताओं को रखने लगे तो उसमें वह उस आशय का एक खण्ड रख दे कि जब विधान के अनुसार कोई व्यक्ति प्राभियुक्त होगा तो वह विधान-मण्डल का सदस्य होने का पात्र न रह जायेगा। इसलिए अनुच्छेद 83 के आधार पर ऐसे प्रधान को जो प्राभियुक्त हो चुका हो, विधान-मण्डल की सदस्यता से अलग किया जा सकता है।

अब केवल एक ही बात रह जाती है जिसके संबंध में मुझे जवाब देना है और वह बात यह है कि प्राभियुक्त प्रधान को पुनः किसी भी पद पर न नियुक्त किया जाय। मेरा ख्याल है कि इस सम्बन्ध में हमें कई बातों पर ख्याल करना होगा। यह सच है कि विधान के प्रावधानों में यह बात नहीं लाई गई है। किन्तु मेरा ख्याल है कि संसद् के लिए यह बिल्कुल शक्य होगा कि जब वह 'सिविल सर्वेन्ट्स एक्ट' बनाने लगे, जो कि निश्चय ही हमारे भावी संसद् को बनाना पड़ेगा, तो सरकारी नौकरों के लिए, उनके परिलाभ एवं नौकरी सम्बन्धी अन्य बातों के सम्बन्ध में निर्योग्यताओं को वह लिपिबद्ध कर दे। स्पष्ट है कि संसद् यह कानून बना सकती है कि जो भी व्यक्ति विधान के अनुसार प्राभियुक्त होगा वह फिर किसी भी पद पर नियुक्त होने का पात्र न रह जायेगा, वह पद चाहे

[माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर]

राजदूत का पद हो या अधिशासन के किसी विभाग में कोई पद हो। इसलिए मेरा ख्याल है कि यह बात संसद द्वारा निर्मित कानून से भी पूरी की जा सकती है।

***श्री एच.वी. कामत:** क्या मैं यह समझूं कि डॉ. अम्बेडकर निजी तौर पर इस संशोधन के पक्ष में हैं?

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** हां। मेरी समझ से तो इस संशोधन में आपत्ति की कोई बात नहीं है सिवाय इस तथ्य के संशोधन का अभिप्राय दूसरे तरीकों से भी पूरा किया जा सकता है।

अब, श्रीमान्, जो दूसरा सवाल आता है वह यह है, क्या यह जरूरी है कि इन निर्योग्यताओं के लिए विधान में ही खास तौर पर लिखित रूप में प्रावधान किया जाये? मेरी समझ से ऐसा करना दो कारणों से अनावश्यक है। पहला कारण तो यह है कि कोई भी व्यक्ति, जिस पर सार्वजनिक रूप में मुकद्दमा चलाया गया हो, जिसे जन-शत्रु घोषित करके लज्जित किया गया हो, वह कभी भी किसी भी पद के लिए अभ्यर्थी बनने का साहस न करेगा। इस बात को ध्यान में रखते हुये, मेरी समझ से तो इस बात की सम्भावना ही नहीं रह जाती कि वह पुनः किसी पद के लिए अभ्यर्थी होगा। दूसरा कारण यह है। क्या इस देश के लोग सार्वजनिक कर्त्तव्य ज्ञान से इतना शून्य होंगे कि वह ऐसे व्यक्ति को, अगर वह खड़ा ही हो जाये तो पुनः चुनेंगे? यह कहना कि विधान में इस आशय का एक स्पष्ट प्रावधान रखना जरूरी है, क्योंकि संभव है, यहां के लोग ऐसे व्यक्तियों को चुन दें जो अपराधी हों, जिन्होंने विश्वास-भंग किया हो या सरकारी कर्त्तव्य का पालन न करके जनता के प्रति विश्वासघात किया हो, मेरी समझ से इस देश के निवासियों पर एक बड़ा ही लज्जापद कलंक लागू करना है। मैं समझता हूं कि ये कमजोरियां सभी समाजों में हैं और उनका विज्ञापन करने से इनको विधान में स्थान देने से कोई लाभ नहीं होगा। इसलिए मेरी समझ से, ये संशोधन कितने ही स्तुत्य क्यों न हों, इनको विधान में रखना अनावश्यक है।

***उपाध्यक्ष:** उपस्थित संशोधनों पर अब मत लिया जायेगा।

संशोधन नं० 1152 जो मि. काजी करीमुद्दीन के नाम में है। प्रस्ताव यह है कि:

"अनुच्छेद 50 के खण्ड (1) में 'for violation of the Constitution' (विधान के अतिक्रमण) शब्दों के बाद 'treason, bribery or other high crimes and misdemeanour (राजद्रोह, घूस या अन्य गम्भीर अपराध और दुराचार) शब्द रखे जायें।

संशोधन नामंजूर हुआ।

***उपाध्यक्ष:** संशोधन नं० 1151 जो प्रो. के.टी. शाह के नाम में हैं, उसका प्रथम भाग लिया जाता है।

प्रश्न यह है कि:

†"अनुच्छेद 50 के खण्ड (1) में 'is to be impeached for' शब्दों के बाद 'treason or' शब्द जोड़ दिये जायें।"

संशोधन अस्वीकृत हुआ।

***उपाध्यक्ष:** संशोधन नं० 1151 जो प्रो. के.टी. शाह के नाम में है। अब इसका दूसरा भाग लिया जाता है।

प्रस्ताव यह है कि:

"अनुच्छेद 50 के खण्ड (1) में 'either House (कोई आगार) शब्दों की जगह 'the People's House' (लोक-सभा) शब्द रखे जायें।"

संशोधन गिर गया।

***उपाध्यक्ष:** अब मैं श्री टी.टी. कृष्णमाचारी द्वारा संशोधित संशोधन नं० 1160 पर मत लेता हूं।

प्रस्ताव यह है कि:

"अनुच्छेद 50 के खण्ड (2) के उपखण्ड (क) में 'thirty members' शब्दों की जगह 'one-fourth of the total number of members'(उस आगार के कुल सदस्यों की एक चौथाई से.....) शब्द रखे जायें।"

संशोधन स्वीकार किया गया।

---

†"अनुच्छेद 50 (1) का संशोधित रूप होगा:

घूस या संविधान के अतिक्रमण के लिए इत्यादि इत्यादि, ..."

***उपाध्यक्षः** अब प्रस्ताव यह है किः

"अनुच्छेद 50 के खण्ड (2) के उपखण्ड (क) में 'thirty members' शब्दों की जगह 'hundred members' शब्द रखे जायें।"

संशोधन नामंजूर हुआ।

†***उपाध्यक्षः** अब प्रस्ताव यह है किः

"अनुच्छेद 50 के खण्ड (2) के उपखण्ड (क) में 'after a notice' (ऐसी·····सूचना) शब्दों की जगह 'after at least 14 days notice' (ऐसी.....कम से कम 14 दिनों की सूचना) शब्द रखे जायें।"

संशोधन स्वीकृत हुआ।

***उपाध्यक्षः** प्रस्ताव यह है किः

"अनुच्छेद 50 के खण्ड (2) के उपखण्ड (क) में 'moved after a' (ऐसी....सूचना) शब्दों की जगह 'moved after 14') (ऐसी····14 दिनों की सूचना) शब्द रखे जायें।"

संशोधन नामंजूर हुआ।

***उपाध्यक्षः** अब प्रस्ताव यह है किः

"अनुच्छेद 50 के खण्ड (2) के उपखण्ड (ख) में 'supported by' शब्दों की जगह 'passed by a majority of' शब्द रखे जायें।"

संशोधन मंजूर हुआ।

***उपाध्यक्षः** प्रस्ताव यह है किः

"अनुच्छेद 50 के खण्ड (2) के उपखण्ड (ख) की जगह निम्नलिखित अंश रखा जायेः

'(ख) इस संकल्प का समर्थन, उपस्थित तथा मतदान करने वाले सदस्यों के बहुमत ने न किया हो।'"

संशोधन अस्वीकृत हुआ।

***उपाध्यक्षः** संशोधन नं० 1168 पर मैं मत नहीं लेने जा रहा हूं क्योंकि यह नं० 1167 से बिल्कुल मिलता-जुलता है। 1167 के सम्बन्ध में मत लिया जा चुका है।

---

†अनुच्छेद का हिन्दी रूप देखने से संशोधन स्पष्ट हो जायेगा।

प्रस्ताव यह है कि:

"अनुच्छेद 50 के खण्ड (2) के उपखण्ड (ख) के बाद निम्नलिखित नया उपखण्ड जोड़ा जाये:

'(ग) बैठकों की अध्यक्षता सर्वोच्च न्यायालय का प्रधान न्यायाधीश करेगा और साक्ष्य की स्वीकृति के सम्बन्ध में उसका निर्णय अन्तिम होगा।'"

संशोधन अस्वीकृत रहा।

***उपाध्यक्ष:** प्रस्ताव यह है कि:

"अनुच्छेद 50 के खण्ड (3) में 'either House' (किसी आगार) शब्दों के स्थान पर 'the People's House' (लोक-सभा) शब्द रखे जायें और 'or cause the charge to be investigated and the President shall have the right to appear and to be represented at such investigation' (या अनुसंधान करायेगा और इस अनुसंधान में उपस्थित होने का तथा अपना प्रतिनिधान कराने का प्रधान को अधिकार होगा) ये शब्द रखे जायें।"

संशोधन नामंजूर हुआ।

***उपाध्यक्ष:** अब प्रस्ताव यह है कि:

"अनुच्छेद 50 के खण्ड (3) में निम्नलिखित 'investigated' शब्द के बाद पूर्णविराम का चिन्ह रखा जायें।"

संशोधन नामंजूर रहा।

***उपाध्यक्ष:** अब प्रस्ताव यह है कि:

"अनुच्छेद 50 के खण्ड (3) के बाद निम्नलिखित नया खण्ड जोड़ा जाये:

'(3-क) अनुसंधान में उपस्थित होने का तथा अपना प्रतिनिधान कराने का प्रधान को अधिकार होगा।'"

संशोधन अस्वीकृत हुआ।

***उपाध्यक्षः** प्रस्ताव यह है किः

"अनुच्छेद 50 के खण्ड (4) में 'passed supported by' (.....समर्थित होकर पास हो जाता है) शब्दों की जगह 'passed by a majority of' (बहुमत द्वारा पास हो जाता है) शब्द रखे जायें।"

संशोधन स्वीकार किया गया।

***उपाध्यक्षः** प्रस्ताव यह है किः

"अनुच्छेद 50 के खण्ड (4) में 'not less than two-thirds of the total membership of the House' (.....आगार के समस्त सदस्यों की दो तिहाई से अन्यून संख्या द्वारा) शब्दों की जगह 'a majority of the members present and voting' (आगार में उपस्थित एवं मतदान करने वाले सदस्यों के बहुमत से) शब्द रखे जायें।"

संशोधन अस्वीकृत रहा।

***उपाध्यक्षः** प्रस्ताव यह है किः

"अनुच्छेद 50 के खण्ड (4) में 'such resolution shall' (वह संकल्प) शब्दों के बाद 'be placed before the People's House and if adopted by the latter, shall' (लोक-सभा के सामने रखा जायगा और यदि उस सभा द्वारा स्वीकृत हुआ तो) शब्द रखे जायें।"

संशोधन अस्वीकृत हुआ।

उपाध्यक्षः अब सवाल है कि संशोधन नं० 1185.....

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमदः** मेरे संशोधन के सम्बन्ध में डॉ. अम्बेडकर ने कोई जवाब नहीं दिया है, श्रीमान्।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** मैं कह चुका हूं, श्रीमान्, कि मैं इसका विरोध करता हूं।

***उपाध्यक्षः** अब प्रस्ताव यह है कि:

"अनुच्छेद 50 के खण्ड (4) में 'date on which' (उसकी पारण तिथि से) शब्दों की जगह 'time when' (उसके पारण के समय से) शब्द रखे जायें।"

संशोधन नामंजूर रहा।

***उपाध्यक्षः** प्रस्ताव यह है कि:

"अनुच्छेद 50 के खण्ड (4) के अन्त में 'by both Houses of Parliament' शब्द जोड़े जायें।"

संशोधन नामंजूर रहा।

***उपाध्यक्षः** अब प्रस्ताव यह है कि:

"अनुच्छेद 50 के खण्ड (4) के अन्त में इतना जोड़ दिया जाये:

'and it shall operate as a disqualification to hold and enjoy any office of honour, trust or profit under the Indian Union.' "

(और इसका प्रभाव यह होगा कि भारतीय संघ के अधीनवर्ती किसी भी सम्मान, विश्वास या लाभ के पद के लिए वह निर्योग्य समझा जायेगा।)

संशोधन अस्वीकृत रहा।

***उपाध्यक्षः** प्रस्ताव यह है कि:

"संशोधित अनुच्छेद 50 को विधान का अंग समझा जाये।"

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

अनुच्छेद 50 को संशोधित रूप में विधान में शामिल किया गया।

अनुच्छेद 51

***उपाध्यक्षः** अब हम अनुच्छेद 51 को लेते हैं।

प्रस्ताव यह है कि:

"अनुच्छेद 51 को विधान का अंग माना जाये।"

[उपाध्यक्ष]

संशोधनों को हम एक-एक करके लेंगे। संशोधन नं० 1190 और 1191 एक ही आशय के हैं और इन पर एक ही साथ विचार किया जाएगा। नं० 1190 अब पेश किया जा सकता है।

(संशोधन नं० 1190 और 1191 पेश नहीं किये गये।)

नं० 1192 को उपस्थित किये जाने की अनुमति नहीं दी जाती है।

नं० 1193—इसका पहला विकल्प तथा नं० 1194 दोनों ही का आशय समान है और इन पर एक ही साथ विचार किया जायेगा। मैं नं० 1193—प्रथम विकल्प को उपस्थित करने की अनुमति दे सकता हूं। मि. मोहम्मद ताहिर आइये।

***श्री मोहम्मद ताहिर:** मैं प्रस्ताव रखता हूं, श्रीमान्, कि:

> "अनुच्छेद 51 के खण्ड (2) में 'six months' (छः मास) और 'full term of five years as provided in article 45 of this Constitution' (इस संविधान के अनुच्छेद 45 में प्रावहित पांच वर्ष की पूर्ण अवधि.....) शब्दों के स्थान पर क्रमश: 'three months' (तीन मास) और 'remaining term of five years in which the vacancy so occurs' (पांच वर्ष से बची हुई अवधि के लिए जिसके अन्दर कि इस तरह पद रिक्त होगा) शब्द रखे जायें।"

छः मास और तीन मास की अवधि के संबंध में मुझे यही कहना है कि यह एक महत्त्वपूर्ण मसला है और जितनी ही जल्दी इसके संबंध में निर्णय हो जाये अच्छा है। छः मास की अवधि इसके लिए बहुत ज्यादा है। इसलिए मैंने तीन महीने का सुझाव दिया है।

अब मैं दूसरी बात की ओर आता हूं। मेरे संशोधन के अनुसार यह होगा कि पांच वर्ष की कालावधि में जो बची हुई अवधि रहेगी। उसी तक नव निर्वाचित प्रधान अपने पद पर रहेगा। मान लीजिए कि प्रधान एक वर्ष तक अपने पद पर रहता है और उसके बाद निष्कासन या पदत्याग अथवा अन्य कारणों से उसका

स्थान रिक्त हो जाता है। अब जो नया प्रधान निर्वाचित होगा वह पांच वर्ष से बची हुई अवधि के लिए ही प्रधान का पद धारण करेगा। ऐसी व्यवस्था करने में मेरा अभिप्राय यह है कि प्रधान तथा संसद्, इन दोनों का कार्यकाल साथ-साथ चलता रहे, ताकि प्रत्येक पांच वर्ष के बाद जब नई संसद् बने, तो उसके साथ एक नया प्रधान भी आये और इस तरह एक शुद्धत नवीन वातावरण में कार्यारम्भ हो। अगर ऐसा नहीं होता है तो, मेरी समझ से कुछ कठिनाइयां पैदा हो जायेंगी। मान लीजिए, दो वर्ष के कार्यकाल के बाद प्रधान का स्थान रिक्त हो जाता है और उसकी जगह नया प्रधान निर्वाचित होकर आता है। अब मूल अनुच्छेद के अनुसार यह होगा कि नव-निर्वाचित प्रधान पांच वर्ष तक प्रधान-पद पर आसीन रहेगा अर्थात् नई संसद् के आ जाने के दो वर्ष बाद तक। इसमें दो कठिनाइयां आयेगी। मान लीजिए कि प्रधान एक दल विशेष का व्यक्ति है और नई संसद् में उस दल का बहुमत नहीं है। ऐसी स्थिति में पदारूढ़ प्रधान क्या करेगा? अवश्य ही कई कारणों से पद से अलग हो जाना पड़ेगा। या तो पदत्याग करेगा या बहुमत प्राप्त दल उसे अपने उद्देश्यों और लक्ष्यों के लिए अनुपयुक्त समझेगा।

और फिर मैं यह कहूंगा कि प्रधान जो कि संसद् के निर्वाचन के समय पदासीन रहेगा, अगर निर्वाचन के पश्चात् कुछ वर्षों तक वह पदासीन रहा तो यह स्वाभाविक है कि अधिकारारूढ़ होने के कारण वह अवश्य ही नवीन निर्वाचन पर अपना असर डालेगा। मेरी राय से यह गणतंत्रीय विचारधारा के सर्वथा विपरीत है कि कोई भी अधिशासी निर्वाचन में अपने प्रभाव का उपयोग करे। और फिर कठिनाई यह है कि इसे कोई रोक नहीं सकता है। कारण यह है कि अधिकारारूढ़ प्रधान स्वभावत: यह चाहेगा कि वह अधिकारारूढ़ बना रहे। सुतरां वह अपने सम्पूर्ण प्रभाव का उपयोग उसी उद्देश्य से करने लगेगा कि उसका दल शासनारूढ़ हो जाये। इसलिए मेरा यह कहना है कि औचित्य की दृष्टि से वांछनीय यही है कि प्रधान का कार्यकाल तथा संसद् का कार्यकाल साथ-साथ चले और दोनों की अवधि एक हो। इन कतिपय शब्दों के साथ मैं सभा के समक्ष, स्वीकारार्थ अपना यह संशोधन उपस्थित करता हूं।

***उपाध्यक्ष:** अपना विकल्प वाला संशोधन भी आप पेश कर सकते हैं।

***श्री मोहम्मद ताहिर:** मेरा, दूसरा वैकल्पिक संशोधन यह है:

"कि अनुच्छेद 51 के स्थान पर निम्नलिखित अंश रखा जाये:

' 51 यदि मृत्यु, पदत्याग अथवा निष्कासन, अथवा अन्य कारण से प्रधान का पद रिक्त हो जाये तो उसकी अवधि के अवशिष्ट काल के लिए, जिसमें कि उस प्रकार पद रिक्त होगा, उप-प्रधान प्रधान के रूप में कार्य करेगा।'"

इस संशोधन को पेश करने में मुझे यह कहना है, श्रीमान्, कि जब भी प्रधान या उप-प्रधान के निर्वाचन का प्रश्न देश या संसद् के सामने आयेगा तो यह स्वाभाविक है कि संसद् और समूचा देश यही सोचेगा कि देश के सर्वोत्तम दो व्यक्तियों को प्रधान और उप-प्रधान पद के लिए चुना जाये। दो सर्वोत्तम व्यक्ति ही इन पदों के लिए चुने जायेंगे। उसके बाद अगर प्रधान का पद रिक्त हो जाता है तो कोई कारण नहीं है कि एक तीसरे व्यक्ति को इसके लिए चुना जाये और दूसरा सर्वोत्तम व्यक्ति जो पहले से ही उप-प्रधान चुना जा चुका है, जो उस पर रह चुका है और जिसे उस पद का कुछ दिनों का अनुभव मिल चुका है, उसे क्यों न प्रधान पद पर आसीन किया जाये। इसलिए मेरी राय में उचित यही है कि प्रधान का पद खाली होने पर, उसके शेष कार्यकाल के लिए उसकी जगह पर उप-प्रधान ही आये।

इन चन्द शब्दों के साथ मैं अपना संशोधन स्वीकृति के लिए सभा के सामने रखता हूं। आशा है, सभा इन संशोधनों पर गम्भीरतापूर्वक विचार करेगी और इनको स्वीकार करेगी।

***उपाध्यक्ष:** अब आता है संशोधन नं० 1198 जो प्रो. के.टी. शाह के नाम में है।

***प्रो. के.टी. शाह:** मेरा प्रस्ताव यह है, श्रीमान्, कि:

"अनुच्छेद 51 के खण्ड (2) के बाद निम्नलिखित नया खण्ड जोड़ा जाये:

'(3) During the interval between the date when a vacancy in the office of the President occurs, and the date

> when new election to that office is completed, and the name of the new President announced, the Vice-President, provided for in the next following article, shall hold the office of and act as President of the Union.' "

> [(3) जिस तिथि पर प्रधान का पद रिक्त होगा और जिस तिथि पर उस पद के लिए नया निर्वाचन पूरा हो जायेगा और नवीन प्रधान का नाम घोषित हो जायगा, इन दोनों के अन्तर्वर्ती काल में उप-प्रधान, जिसका कि अलग दूसरे अनुच्छेद में प्रावधान किया गया है, संघ के प्रधान के पद पर आसीन रहेगा और प्रधान के रूप में कार्य करेगा।]

यह केवल एक आनुषंगिक संशोधन है। प्रधान के निष्कासन, पदत्याग या उसकी मृत्युकाल से लेकर उसके उत्तराधिकारी चुने जाने तक जो व्यवधान पड़ेगा उसकी पूर्ति की इसमें व्यवस्था की गई है। प्रधान की मृत्यु या निष्कासन के समय से लेकर उसके उत्तराधिकारी चुने जाने तक की मध्यवर्ती अवधि के लिए—वह अवधि चाहे तीन मास की हो या छः मास की हो या जितनी भी हो—कोई न कोई प्रबन्ध तो हमें करना ही होगा। कम से कम मेरा यह संशोधन तो अवश्य एक ऐसा उदाहरण है, जिसे मैं अमेरिकन विधान के अननुकरण का प्रमाण न दे सकता हूं। अमेरिकन विधान में तो यह है कि ऐसी अवस्था में उप-प्रधान प्रधान का पद ले लेता है और इस तरह वहां नवीन निर्वाचन की नौबत ही नहीं आती। यहां अपने विधान में हमने न केवल नये निर्वाचन पर ही जोर दिया है बल्कि वह व्यवस्था की है कि नव निर्वाचित प्रधान न केवल पूर्ववर्ती प्रधान के कार्यकाल की अवशिष्ट अवधि के लिए ही प्रधान होगा, बल्कि वह पांच साल की पूर्ण अवधि के लिए प्रधान रहेगा। मसौदा-समिति के अध्यक्ष यदि मेरे संशोधन के मूलगत सिद्धान्त पर तथा उसके शब्दों पर विचार करें तो वह देखेंगे कि मेरे संशोधनों में अमेरिकन विधान का उतना अनुकरण नहीं किया गया है, जितना कि खुद उन्होंने अपने मसौदे में किया है। हां, हम लोगों में यह अन्तर जरूर है कि मेरी 'आस्था' जैसा कि वह कहते हैं केवल अमेरिकन विधान के प्रति है, पर उनकी आस्था दुनिया के कितने ही विधानों के प्रति है और उन सभी से उन्होंने कुछ न कुछ अवश्य ही नकल कर रखा है।

[प्रोफेसर के.टी. शाह]

अस्तु इन बातों से हमारी इस आवश्यकता पर कोई असर नहीं पड़ता कि मध्यवर्ती काल के लिए कुछ न कुछ व्यवस्था होनी ही चाहिए। जहां तक मैं देखता हूं, विधान में इस मध्यवर्ती काल के लिए, जब तक कि प्रधान का पद रिक्त रह सकता है, कोई संतोषजनक प्रबन्ध नहीं किया गया है। मेरे संशोधन में इसी आवश्यकता की व्यवस्था की गई है और आशा है, सभा इसे स्वीकार करेगी।

***उपाध्यक्षः** संशोधन नं० 1195, 1196 तथा 1197 केवल शाब्दिक मात्र हैं, इसलिये इनको पेश करने की अनुमति नहीं दी जाती है। डॉ. अम्बेडकर, इन संशोधनों के संबंध में अब आप अपना मत दीजिए।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** मुझे खेद है, श्रीमान्, कि प्रो. के.टी. शाह के संशोधन को स्वीकार करने में मैं असमर्थ हूं। अनुच्छेद 54 (1) में उनके संशोधन की सभी बातें आ जाती हैं। जो संशोधन उन्होंने पेश किया है, उसमें और अनुच्छेद 54 के खण्ड (1) में, मुझे कोई अन्तर नहीं दिखाई देता। मेरा ख्याल है कि अगर वह इस अनुच्छेद को देखें तो यह बात उनकी समझ में आ जायेगी कि उनके संशोधन की कोई जरूरत नहीं रह जाती है।

अन्य संशोधनों में तथा विधान के प्रावधान में एकमात्र अन्तर इतना ही है कि संशोधनों में यह कहा गया है कि निष्कासन आदि के फलस्वरूप निर्वाचन होने पर जो नवीन प्रधान आयेगा वह अपने पूर्वाधिकारी की अवशिष्ट कालावधि के लिए उस पद पर रहेगा, जब कि मसौदे में यह प्रावधान किया गया है कि प्रधान के पद-त्याग अथवा मृत्यु आदि के फलस्वरूप जो नवीन प्रधान आयेगा, वह विधान द्वारा प्रावहित पूर्ण अवधि के लिए प्रधान पद पर आसीन रहेगा। मैं तो कोई कारण नहीं देख पाता कि अगर कोई व्यक्ति किसी पद के लिए चुना जाता है तो उसके कार्यकाल की अवधि क्यों न वही पूर्ण अवधि रहे, जो विधान में उस पद के लिये प्रावहित है और क्यों उसकी कालावधि उसके पूर्वाधिकारी की अवशिष्ट अवधि तक ही सीमित की जाये। इसलिए इस संशोधन के लिए मुझे तो कोई औचित्य नहीं दिखाई देता।

***उपाध्यक्ष:** अब मैं संशोधन नं० 1193 के प्रथम विकल्प पर मत लेता हूं जिसे मि. मोहम्मद ताहिर ने पेश किया है।

प्रस्ताव यह है कि:

"अनुच्छेद 51 के खण्ड (2) में 'six months' (छः मास) और 'full term of five years as provided in article 45 of this Constitution' (इस संविधान के अनुच्छेद 45 में प्रावहित पांच वर्ष की पूर्ण अवधि.....) शब्दों के स्थान पर क्रमशः 'three months' (तीन मास) तथा 'remaining term of five years in which the vacancy so occurs' (पांच वर्ष से बची हुई अवधि के लिए जिसके अन्दर कि इस तरह पद रिक्त होगा) शब्द रखे जायें।"

संशोधन स्वीकार नहीं हुआ।

***उपाध्यक्ष:** संशोधन नं० 1194 जो प्रो. के.टी. शाह के नाम में है।

प्रस्ताव यह है कि:

"अनुच्छेद 51 के खण्ड (2) में 'hold office for the full term of five years' (पांच वर्ष की पूर्ण कालावधि के लिए पद-धारण करेगा) शब्दों की जगह 'hold office for the balance of term of five years' (पांच वर्ष से बची हुई कालावधि के लिए पद-धारण करेगा) शब्द रखे जायें।"

संशोधन अस्वीकृत रहा।

***उपाध्यक्ष:** संशोधन नं० 1198—दूसरा विकल्प जो मि. मोहम्मद ताहिर के नाम में है।

प्रस्ताव यह है कि:

"अनुच्छेद 51 के स्थान पर निम्नलिखित अंश रखा जाये:

'51. यदि मृत्यु, पदत्याग अथवा निष्कासन अथवा अन्य कारणों से प्रधान का पद रिक्त हो जाये तो उसकी अवधि के अवशिष्ट काल के लिए, जिसमें कि इस प्रकार पद रिक्त होगा, उप-प्रधान प्रधान के रूप में कार्य करेगा।'"

संशोधन अस्वीकृत हुआ।

***उपाध्यक्षः** अब प्रस्ताव यह है किः

"अनुच्छेद 51 विधान का अंग माना जाये।"

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

अनुच्छेद 51 को विधान में शामिल किया गया।

नवीन अनुच्छेद 51-क

***उपाध्यक्षः** अब हम संशोधन नं० 1199 पर आते हैं जो प्रो. के.टी. शाह के नाम में है।

***प्रोफेसर के.टी. शाहः** श्रीमान्, क्या मुझे संशोधन के दूसरे हिस्से को पेश करने की आप अनुमति दे रहे हैं, जिसमें प्रधान के पेंशन (उत्तर वेतन) का जिक्र है?

***उपाध्यक्षः** प्रधान के पेंशन के प्रश्न पर तो शायद आप किसी पहले के संशोधन में विचार कर चुके हैं।

***प्रोफेसर के.टी. शाहः** हां, श्रीमान्, इसीलिये तो मैंने यह पूछा।

***उपाध्यक्षः** तब दूसरे हिस्से को छोड़ दीजिए।

***प्रोफेसर के.टी. शाहः** तो मैं इस संशोधन को पेश न करूंगा।

अनुच्छेद 52

***उपाध्यक्षः** अब हम अनुच्छेद 52 को लेते हैं।

मैं देखता हूं कि इस संशोधन में एक ऐसे मसले की चर्चा की गई है जिसका सम्बन्ध अनुच्छेद 1 से है। मैं विश्वास करता हूं कि अगर इसी तरह का कोई परिवर्तन अनुच्छेद 1 में किया जाता है तो मसौदा-समिति स्वयं ही तीसरी, आवृत्ति (reading) में तदनुसार परिवर्तन कर देगी। इस विश्वास के आधार पर मैं इसे पेश करने की अनुमति नहीं देता हूं। श्री कामत, आप यह मानने को तैयार हैं तो?

***श्री एच.वी. कामतः** मैं इस संशोधन को पेश नहीं करूंगा, श्रीमान्।

***उपाध्यक्षः** तो मैं इस पर मत ले सकता हूं।

प्रस्ताव यह है किः

"अनुच्छेद 52 को विधान का अंग माना जाये।"

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

अनुच्छेद 52 विधान में शामिल किया गया।

अनुच्छेद 53

***उपाध्यक्षः** अब हम लेते हैं अनुच्छेद 53 को।

संशोधन नं० 1201 को पेश करने की अनुमति नहीं दी जाती है क्योंकि इसका निषेधात्मक प्रभाव पड़ता है। संशोधन नं० 1202 तथा 1203 समान आशय के प्रतीत होते हैं, इसलिए 1202 को उपस्थित किये जाने की अनुमति देता हूं।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** मैं यह प्रस्ताव रखता हूं, श्रीमान्, किः

"अनुच्छेद 53 में 'or position of emolument' (परिलाभ का पद अथवा स्थिति) शब्दों की जगह 'of profit' (लाभ का पद) शब्द रखे जायें।"

***उपाध्यक्षः** अब आता है संशोधन नं० 1204 जो मि. मोहम्मद ताहिर के नाम में है।

***श्री मोहम्मद ताहिरः** मैं इसे पेश नहीं कर रहा हूं, श्रीमान्।

***उपाध्यक्षः** संशोधन नं० 1205 जो डॉक्टर अम्बेडकर के नाम में है।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** मेरा प्रस्ताव है किः

"अनुच्छेद 53 के परादिक में इतना और जोड़ दिया जायेः

'और ऐसे वेतन या अधिदेय का अधिकारी न होगा जो इस संविधान के अनुच्छेद 79 के अनुसार राज्य-परिषद् के सभापति को देय हो।'"

इस प्रावधान का अभिप्राय यह है कि दुतरफा लाभ वह न उठा सके।

***उपाध्यक्षः** मि. नज़ीरुद्दीन ने एक संशोधन भेजा है जिसकी संख्या है 33। यह केवल शाब्दिक है इसलिए इसे पेश करने की अनुमति नहीं दी जाती है।

अब मैं इन संशोधनों पर मत लेता हूं। इन संशोधनों पर किसी सदस्य को कुछ कहना तो नहीं है?

***श्री एच.वी. कामतः** संशोधन 1205 के सम्बन्ध में एक बात जानना चाहता हूं, श्रीमान्। जब उप-प्रधान, प्रधान के रूप में कार्य करेगा तो उसे प्रधान के वेतन तथा अधिदेय दिये जायेंगे या सिर्फ उप-प्रधान के?

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** उस समय उसे प्रधान का वेतन मिलेगा अर्थात् वह वेतन दिया जायेगा जो उस पद के लिये दिया जाता है।

***उपाध्यक्षः** अब मैं इन संशोधनों पर मत लेता हूं। संशोधन नं० 1202 जो डॉ. अम्बेडकर के नाम में है।

प्रस्ताव यह है किः

"अनुच्छेद 50 में 'or position of emolument'(परिलाभ का पद अथवा स्थिति) शब्दों की जगह 'of profit' (लाभ का पद) शब्द रखे जायें।"

संशोधन स्वीकृत हुआ।

***उपाध्यक्षः** मिस्टर नज़ीरुद्दीन अहमद, क्या आप यह चाहते हैं कि आप के संशोधन पर मत लूं जो पहले के संशोधन से बिल्कुल मिलता-जुलता है?

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमदः** नहीं, श्रीमान्।

***उपाध्यक्षः** तो अब मैं संशोधन नं० 1205 पर मत लेता हूं

प्रस्ताव यह है किः

"अनुच्छेद 53 के परादिक में इतना और जोड़ दिया जायेः

'और यह ऐसे वेतन या अधिदेय का अधिकारी न होगा जो इस संविधान के अनुच्छेद 79 के अनुसार राज्य-परिषद् के सभापति को देय हो।'"

संशोधन स्वीकृत हुआ।

***उपाध्यक्ष:** अब प्रस्ताव यह है कि:

"अनुच्छेद 53 को उसके संशोधित रूप में विधान का अंग माना जाय।"

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

अनुच्छेद 53 विधान में शामिल किया गया।

अनुच्छेद 54

***उपाध्यक्ष:** अब हम अनुच्छेद 54 पर आते हैं।

सभा के सामने प्रस्ताव यह है कि:

"अनुच्छेद 54 को विधान का अंग माना जाये।"

इसके सम्बन्ध में आये हुए संशोधनों पर हम विचार करते हैं। संशोधन नं० 1206, यह मि. मोहम्मद ताहिर के नाम में है।

***श्री मोहम्मद ताहिर:** मैं इसे नहीं पेश कर रहा हूं, श्रीमान्।

***उपाध्यक्ष:** अब आता है संशोधन नं० 1207। चूंकि संशोधन नं० 1185 को पेश करने की अनुमति नहीं दी जाती है, इसलिए.....

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमद:** यहां तो स्थिति बिल्कुल ही भिन्न है, श्रीमान्। मैं एक मिनट में इसे स्पष्ट कर दूंगा।

***उपाध्यक्ष:** अच्छी बात है, आप संशोधन पेश कीजिए।

***श्री नजीरुद्दीन अहमद:** मैं प्रस्ताव करता हूं कि:

"अनुच्छेद 54 के खण्ड (1) में 'date on which' (उस तिथि तक... जब) शब्दों की जगह 'time when'(उस समय तक....जब) शब्द रखे जायें।"

मैं बहुत ही संक्षेप में अपनी बात कहूंगा। ये शब्द आये हैं अनुच्छेद 54 के खण्ड (1) में। यहां कहा गया है कि प्रधान का पद रिक्त होने पर उस तिथि तक उप-प्रधान, प्रधान का स्थानापन्न होगा, जब तक कि नव निर्वाचित प्रधान

[श्री नजीरुद्दीन अहमद]

अपने पद पर प्रवेश न करे। मैं सभा के सामने एक ही स्थिति का उदाहरण रखता हूं और उससे अनुरोध करता हूं कि वह उस पर विचार करे। मान लीजिए कि प्रधान का पद रिक्त होने पर उप-प्रधान उसका स्थानापन्न होता है और नया प्रधान पहली जनवरी को निर्वाचित होकर 12 बजे दिन को अपने पद पर प्रवेश करता है। मूल खण्ड में यह कहा गया है कि उप-प्रधान उस तिथि तक प्रधान का स्थानापन्न होगा जब तक कि नया प्रधान अपने पद पर प्रवेश न करे। इसलिए वह केवल 31 दिसम्बर तक ही प्रधान के रूप में कार्य कर सकेगा क्योंकि इस खण्ड के अनुसार वह केवल "उस तिथि तक" प्रधान का स्थानापन्न होगा जब तक कि नया प्रधान अपने पद पर प्रवेश न करे। ऐसी सूरत में 31 दिसम्बर की मध्य रात्रि से लेकर पहली जनवरी के दोपहर तक जब कि नया प्रधान अपने पद पर प्रवेश करता है, प्रधान का पद सर्वथा रिक्त ही रहेगा और भारतीय सरकार के कार्यों की अध्यक्षता के लिए कोई न रहेगा। न प्रधान ही रहेगा और न उप-प्रधान ही रहेगा। इस राजनैतिक व्यवधान की पूर्ति के लिए ही यह संशोधन रखा गया है।

***उपाध्यक्ष:** संशोधन नं० 1208 और 1209 केवल शाब्दिक हैं इसलिए इनको पेश करने की अनुमति नहीं दी जाती है।

संशोधन नं० 1211 और 1210 एक ही आशय के हैं। इनमें पहला अधिक व्यापक है और वह पेश किया जा सकता है।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** मैं प्रस्ताव रखता हूं कि:

"अनुच्छेद 54 के खण्ड (3) में निम्नलिखित अंश जोड़ दिया जाये:

'and be entitled to such privileges, emoluments and allowances as may be determined by Parliament by law and until provision in that behalf is so made, such privileges, emoluments and allowances as are specified in the Second Schedule.' "

(तथा ऐसे विशेषाधिकारों, परिलाभों और अधिदेयों का अधिकारी होगा जिन्हें संसद् विधि द्वारा निश्चित करे, और जब तक इस संबंध में प्रावधान नहीं बनता तब तक वह ऐसे विशेषाधिकारों परिलाभों और अधिदेयों का अधिकारी रहेगा जो द्वितीय अनुसूची में उल्लिखित हैं।)

मसौदे में यह बात छूट गई है और इसे विधान में स्थान देने के लिए ही यह संशोधन रखा जा रहा है।

***उपाध्यक्षः** अनुच्छेद 49 के स्वीकृत हो जाने से संशोधन नं० 1212 और 1213 के पेश किये जाने पर रुकावट पड़ गई है।

***श्री एच.वी. कामतः** संशोधन नं० 1211 के संबंध में, जिसे डॉ. अम्बेडकर ने उपस्थित किया है, मैं कुछ कहना चाहता हूं, श्रीमान्, अभी कुछ देर पहले उन्होंने यह कहा है कि उप-प्रधान जब प्रधान का स्थानापन्न होगा तब उसे वही परिलाभ और अधिदेय मिलेंगे जो कि प्रधान को मिलते हैं। किन्तु इस संशोधन में यह कहा गया है कि वह "ऐसे विशेषाधिकारों, परिलाभों और अधिदेयों का अधिकारी होगा जिन्हें संसद् विधि द्वारा निश्चित करे और जब तक इस संबंध में प्रावधान नहीं बनता तब तक वह ऐसे विशेषाधिकारों, परिलाभों और अधिदेयों का अधिकारी रहेगा जो द्वितीय अनुसूची में उल्लिखित हैं"। उप-प्रधान जब प्रधान के रूप में कार्य करता है तो उसके सम्बन्ध में यह भेद क्यों किया जा रहा है कि जब तक इस संबंध में संसद् प्रावधान न बना दे तब तक वह उन परिलाभों या अधिदेयों को पायेगा जो द्वितीय अनुसूची में उल्लिखित हैं? जब तक वह प्रधान के रूप में कार्य करता है तब तक उसे प्रधान के परिलाभ और अधिदेय मिलने ही चाहिएं। मैं जानना चाहता हूं कि आखिर यह अन्तर क्यों रखा गया है।

***पं. ठाकुरदास भार्गवः** अनुच्छेद 54(3) यह कहता है, श्रीमान्, किः

> "The Vice-President shall, during and in respect of the period, while he is so acting as, or discharging the functions of the President, have all the powers and immunities of the President."

> (उप-प्रधान, उस कालावधि में और उस कालवधि के संबंध में जब कि वह प्रधान का स्थानापन्न है अथवा उसके प्रकायों का पालन कर रहा है, प्रधान की सब शक्तियों और विमुक्तियों का अधिकारी होगा।)

डॉ. अम्बेडकर ने जो संशोधन पेश किया है उसमें विशेषाधिकारों, परिलाभों

[पं. ठाकुरदास भार्गव]

तथा अधिदेयों की चर्चा अवश्य की गई है किन्तु उसमें इस बात का उल्लेख नहीं है कि उप-प्रधान जब प्रधान का स्थानापन्न रहेगा, उस समय उसके क्या कर्त्तव्य और दायित्व होंगे। अगर उप-प्रधान संविधान का अतिक्रमण करे तो उस पर किस प्रकार से प्राभियोग लगाया जायेगा या उस संबंध में क्या कार्यवाही की जायेगी। इसके लिए विधान में कोई प्रावधान नहीं रखा गया है।

और आगे जाने पर विधान के अनुच्छेद 56 में यह प्रावधान देखते हैं कि संसद् के दोनों आगारों द्वारा पास किये हुए प्रस्ताव के द्वारा उसे पद से निष्कासित किया जा सकता है। किन्तु संविधान के अतिक्रमण के संबंध में या कर्त्तव्यपालन में च्युत होने के संबंध में विधान में कोई प्रावधान नहीं रखा गया है। जब उप-प्रधान, प्रधान का स्थानापन्न रहे उस समय प्रधान के कर्त्तव्यों और दायित्वों का भार उस पर होना चाहिए। इसलिए मैं चाहता था कि "शक्तियों और विमुक्तियों" शब्दों के बाद "दायित्व तथा कर्त्तव्य" ये शब्द भी आ जाते। इन शब्दों के रख देने से हमारा काम पूरा हो जायेगा। इस आशय का एक संशोधन मैंने भेजा है किन्तु चूंकि सदस्यों के पास यह नहीं भेजा गया है, मैं इसे बाकायदा पेश नहीं करूंगा; पर मैं जरूर चाहूंगा कि डॉ. अम्बेडकर 'शक्तियों और विमुक्तियों' शब्दों के बाद 'दायित्वों और कर्त्तव्यों' शब्दों को जोड़ने पर विचार करें। ऐसा होने से यह अनुच्छेद सर्वथा सम्पूर्ण हो जायेगा और इसमें जो त्रुटि रह गई है वह जाती रहेगी।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** उपाध्यक्ष महोदय, जो संशोधन उपस्थित किये गये हैं उनमें मुख्यत: तीन बातें उठाई गई हैं। मि. नज़ीरुद्दीन अहमद ने अपने संशोधन में समय का सवाल उठाया है। माननीय मित्र मि. नज़ीरुद्दीन अहमद कितने सतर्क व्यक्ति हैं, यह बात हम सबको अब तक अच्छी तरह मालूम हो गई है। वह चाहते हैं कि विधान में स्पष्ट रूप से समय का उल्लेख कर दिया जाये कि जिस समय प्रधान पद खाली करेगा उसकी जगह उप-प्रधान पदासीन हो जायेगा। मैं नहीं समझता कि विधान में इतनी सतर्कता की कोई जरूरत है, अस्तु। अपने संशोधन में उन्होंने यह नहीं बताया है कि समय कौन-सा लिया जायेगा। इसलिए उनका संशोधन मानने में मुझे कठिनाई है। कौन-सी समय-पद्धति उनके दिमाग में है? ग्रीनविच से वह समय लेना चाहते हैं या वर्तमान स्टैंडर्ड टाइम को रखना चाहते हैं या कलकत्ता अथवा बम्बई के समय

को लेते हैं?

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमद:** मेरा मतलब है कि ठीक उस समय से जब कि प्रधान पदासीन किया जायेगा।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** समय क्या था यह तय करना तो बड़ा मुश्किल होगा। जब तक कि समय-पद्धति का वह खुलासा नहीं करते, 'समय' शब्द रख देने से इस संबंध में कोई अधिक स्पष्टता या सुनिश्चितता नहीं आ सकती।

दूसरी बात यह है कि जहां तक इस खंडविशेष का सम्बन्ध है, मैं देखता हूं कि यह संशोधन सर्वथा अनावश्यक है क्योंकि अनुच्छेद 54 के उपखंड (1) में कहा गया है कि 'रिक्त पूर्ति सम्बन्धी प्रावधानों के अनुसार निर्वाचित नया प्रधान अपने पद पर प्रवेश न करें'। निश्चय ही प्रधान अपने पद पर प्रवेश करेगा, किसी समय उसी तिथि पर। हो सकता है वह उस दिन आधी रात को पद-प्रवेश करे या दिन के 12 बजे। यहां समय की बात तो अपने आप ही निश्चित हो जाती है, इसलिए यह संशोधन सर्वथा अनावश्यक है।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमद:** खंड में कहा गया है कि उप-प्रधान 'उस तिथि तक' प्रधान का स्थानापन्न रहेगा जब तक कि नया प्रधान अपने पद पर प्रवेश न कर ले। इसमें यह तो नहीं कहा गया है कि वह 'उस समय तक' स्थानापन्न रहेगा जब तक कि नया प्रधान पद-प्रवेश न कर ले।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** निश्चय है कि वह उस तिथि पर किसी समय ही अपने पद पर प्रवेश करेगा। सम्भव है कि वह ज्योतिषी से कोई शुभ मुहूर्त पूछे। अस्तु यह संशोधन सर्वथा अनावश्यक है।

माननीय मित्र श्री कामत ने कहा है कि पूर्ववर्ती अनुच्छेद के संबंध में वादानुवाद का उत्तर देते हुये या अपना संशोधन पेश करते हुए मैंने यह कहा था कि जब उप-प्रधान का स्थानापन्न रहेगा तो उसे प्रधान के ही परिलाभ दिये जायेंगे। मैंने जो संशोधन रखा है, उसके अनुसार संसद् को यह अधिकार होगा कि वह उस काल के लिए उप-प्रधान का वेतनादि निश्चित कर सकती है जब कि वह प्रधान का स्थानापन्न हो। इस संशोधन में और मेरे वक्तव्य में सामंजस्य

[माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर]

पाना उन्हें कठिन मालूम पड़ता है। अगर मित्र कामत मसौदे के पृष्ठ 161 पर दृष्टि डालें तो देखेंगे कि वहां एक अनुसूची दी गई है जिसमें प्रधान का वेतन तय कर दिया गया है। उस अनुसूची की कंडिका पैरा (5) में उप-प्रधान का वेतन निश्चित कर दिया गया है। अवश्य ही जब कोई व्यक्ति प्रधान का स्थानापन्न रहेगा तो विधान में प्रावहित वेतन का ही वह अधिकारी होगा, चाहे कितनी ही कम उम्र में वह उस पद पर क्यों न पहुंच गया हो। किन्तु यह महसूस किया गया कि अल्पकालिक अवधि के लिए अगर कोई व्यक्ति प्रधान का स्थानापन्न होता है तो उसके लिए वेतनादि निश्चित करने का काम संसद् पर छोड़ना आवश्यक हो सकता है। हो सकता है कि संसद् उसे प्रधान का वेतन न देना चाहे क्योंकि उसके कार्यकाल की अवधि वहीं नहीं होगी जो कि खुद प्रधान की होती है। अत: अगर संसद् ने इस संबंध में कोई प्रावधान नहीं किया तो उसे प्रधान का ही वेतन दिया जायेगा। किन्तु संसद् भिन्न वेतन देने का प्रावधान कर सकती है। इसीलिए यह संशोधन रखा गया है।

***श्री एच.वी. कामत:** मैं अपने माननीय मित्र डॉ. अम्बेडकर का ध्यान अनुच्छेद 48 (4) की ओर खींचना चाहता हूं, जिसमें कहा गया है कि प्रधान के परिलाभ और अधिदेय के संबंध में, उसके कार्यकाल में कम नहीं किये जायेंगे। क्या मैं यह समझूं कि आप प्रधान तथा स्थानापन्न प्रधान के बीच अन्तर बरतने जा रहे हैं?

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** निश्चय ही।

***श्री एच. वी. कामत:** गत अनुच्छेद के संबंध में आये हुये एक संशोधन पर जब मैंने आपत्ति की थी, तो डॉ. अम्बेडकर ने यह कहा कि उप-प्रधान जब प्रधान का स्थानापन्न रहेगा तो उसे प्रधान के वेतन तथा अधिदेय ही दिये जायेंगे।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** जब तक कि संसद् अन्यथा प्रावधान न करे, उप-प्रधान जब तक प्रधान का स्थानापन्न रहेगा, तब तक वह प्रधान का ही वेतन पायेगा। कोई कारण नहीं है कि क्यों संसद् को यह शक्ति न दी जाये कि अल्पकालिक अवधि के लिए, प्रधान का स्थानापन्न होने वाले उप-प्रधान के वेतन को वह निश्चित कर सकती है।

पंडित ठाकुरदास भार्गव ने यह बात कही है कि उप-प्रधान जब प्रधान का

स्थानापन्न रहेगा तो उस पर प्राभियोग चलाने के संबंध में विधान में कोई व्यवस्था नहीं रखी गई है। स्पष्ट है कि उप-प्रधान जब प्रधान का स्थानापन्न हो जायेगा तो प्रधान के सभी कर्त्तव्य और दायित्व स्वतः उस पर आरोपित हो जायेंगे चाहे इसका स्पष्ट उल्लेख भले ही न किया जाये। उस कालावधि में, जब कि वह प्रधान का स्थानापन्न रहता है, यदि वह कोई अपराध करता है या ऐसा कोई काम करता है जिससे वह अपने प्राभियोग को संकट में डाल देता है तो उसे इस कारण से विमुक्ति नहीं मिल सकेगी कि वह तो उप-प्रधान है या प्रधान का केवल स्थानापन्न मात्र है। इसलिए ऐसे प्रावधान की कोई जरूरत ही नहीं है।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमदः** उपाध्यक्ष महोदय, क्या मैं यह पूछ सकता हूं कि...

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** इस समय मैं किसी भी जिरह में पड़ने के लिए तैयार नहीं हूं।

***उपाध्यक्षः** मि. नज़ीरुद्दीन अहमद अपना स्थान ग्रहण करें।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमदः** माननीय डॉ. अम्बेडकर का ध्यान मैं एक त्रुटि की ओर आकृष्ट करना चाहता हूं।

***उपाध्यक्षः** वह उसे सुनने पर तैयार नहीं हैं, ऐसी सूरत में मैं क्या कर सकता हूं? मैं उन्हें मजबूर तो कर नहीं सकता।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमदः** उन्हें मजबूर तो कोई भी नहीं कर सकता, किन्तु बात यह है कि अनुच्छेद 54 के खण्ड (3) में.....

***उपाध्यक्षः** अब मैं संशोधन पर मत लेने जा रहा हूं। डॉ. अम्बेडकर यह कह चुके हैं कि वह कोई भी जवाब नहीं देंगे।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमदः** मैं आशा करता हूं कि वह इस बात पर विचार करेंगे।

***उपाध्यक्षः** मैंने मिस्टर नज़ीरुद्दीन अहमद को बोलने के लिए तो नहीं कहा है।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमदः** श्रीमान्, मैं सभा का ध्यान एक बात की ओर आकृष्ट करना चाहता हूं जिससे मतों पर प्रभाव पड़ सकता है।

***उपाध्यक्षः** तीसरी आवृत्ति के समय आप क्यों न ऐसा करें? मैं संशोधन पर मत लेने जा रहा हूं।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमदः** किन्तु, श्रीमान्, यह एक बहुत ही महत्त्वपूर्ण बात है।

***उपाध्यक्षः** यह आपका ख्याल है। अब मैं आपसे साग्रह कहूंगा कि आप अपना स्थान ग्रहण करें।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमदः** मैं आपके अनुरोध का पालन करूंगा।

***उपाध्यक्षः** अब मैं मि. नज़ीरुद्दीन अहमद के संशोधन नं० 1205 पर मत लेता हूं।

प्रस्ताव यह है कि:

"अनुच्छेद 54 के खण्ड (1) में 'date on which' (जिस तिथि पर) शब्दों की जगह 'time when' (उस समय) शब्द रखे जायें।"

संशोधन नामंजूर रहा।

***उपाध्यक्षः** अब प्रस्ताव यह है कि:

"अनुच्छेद 54 के खण्ड (3) में निम्नलिखित अंश जोड़ दिया जाये:

'and be entitled to such privileges, emoluments, and allowances as may be determined by Parliament by law and until provision in that behalf is so made such privileges, emolument and allowances as are specified in the Second Schedule.' "

(तथा ऐसे विशेषाधिकारों, परिलाभों और अधिदेयों का अधिकारी होगा जिन्हें संसद् विधि निश्चित करे, और जब तक इस संबंध में प्रावधान नहीं बनता तब तक वह ऐसे विशेषाधिकारों, परिलाभों और अधिदेयों का अधिकारी रहेगा जो द्वितीय अनुसूची में उल्लिखित हैं।)

संशोधन स्वीकृत हुआ।

***उपाध्यक्षः** अब प्रस्ताव यह है कि:

"अनुच्छेद 54 के खण्ड (3) में 'have all the powers' शब्दों के बाद 'and privileges, emoluments' शब्द जोड़ दिये जायें।"

संशोधन नामंजूर रहा।

***उपाध्यक्ष:** अब प्रस्ताव यह है कि:

"अनुच्छेद 54 को, उसके संशोधित रूप में, विधान का अंग माना जाये।"

प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

अनुच्छेद 54 विधान में शामिल किया गया।

अनुच्छेद 55

***उपाध्यक्ष:** अब अनुच्छेद 55 पर विचार प्रारम्भ किया जायेगा। इस अनुच्छेद के संबंध में पहला संशोधन है श्री हिम्मत सिंह के. माहेश्वरी का। चूंकि सदस्य महोदय सभा में उपस्थित नहीं हैं इसलिये यह संशोधन नहीं पेश हो रहा है।

संशोधन नं० 1215 जो मि. मोहम्मद ताहिर के नाम में है तथा नं० 1218 जो प्रो. के. टी. शाह के नाम में है—यह दोनों ही एक समान हैं। प्रो. शाह अपना संशोधन पेश कर सकते हैं।

***प्रोफेसर के. टी. शाह:** उपाध्यक्ष महोदय, मैं यह प्रस्ताव रखता हूं कि:

> "अनुच्छेद 55 के खण्ड (1) में 'by the members of both Houses of Parliament assembled at a joint meeting in accordance with the system of proportional representation by means of the single transferable vote and the voting at such election shall be by secret ballot' (संयुक्त अधिवेशन में एकत्रित संसद् के उभय आगारों के सदस्यों द्वारा अनुपाती प्रतिनिधान पद्धति के अनुसार एकल संक्राम्य मत द्वारा.....और ऐसे निर्वाचन में) शब्दों की जगह 'at the same time and in the same manner as the President' (उप-प्रधान का निर्वाचन उसी समय और उसी पद्धति से होगा जैसे कि प्रधान का होता है) रखा जाये।"

मैं यहां यह बतला दूं, यद्यपि मेरा यह कथन मेरे ही खिलाफ जायेगा, कि बालिग मताधिकार के संबंध में एक संशोधन द्वारा मैंने प्रधान के निर्वाचन की एक पद्धति का सुझाव पहले दिया था और उस संशोधन को सभा ने कृपया ठुकरा भी दिया था। उस संशोधन में सुझाई गई पद्धति के अनुरूप ही मेरा यह संशोधन भी है। नियमत: इस संशोधन को अब मैं पेश कर सकता हूं, इस पर मुझे शक है।

***उपाध्यक्ष:** माननीय सदस्य से मैं अनुरोध करूंगा कि वह अपने विवेक से काम लें।

***प्रोफेसर के.टी. शाह:** मैं तो अपनी ही बात सुनने का आदी नहीं हूं। मैं तो केवल उस त्रुटि को बतला देना चाहता हूं जो यहां है।

***उपाध्यक्ष:** ऐसी सूरत में, मैं समझता हूं कि माननीय सदस्य इसे न पेश करें यही अच्छा है। सुतरां इस पर मत लेने की कोई आवश्यकता नहीं है।

***श्री मोहम्मद ताहिर:** मैं प्रस्ताव रखता हूं कि:

"अनुच्छेद 55 के खण्ड (1) की जगह निम्नलिखित अंश रखा जाये:

'(1) The Vice-President shall be elected in the same manner as provided in article 43.' "

[(1) उप-प्रधान का निर्वाचन उसी तरह से किया जायगा जैसा कि अनुच्छेद 43 में प्रावहित है।]"

अनुच्छेद 43 में वह पद्धति दी गई है जिसके अनुसार प्रधान निर्वाचित होगा। मेरा ख्याल है, श्रीमान्, कि जहां तक प्रधान और उप-प्रधान के निर्वाचन का सम्बन्ध है उसमें एक ही पद्धति बरती जानी चाहिये, उसमें कोई अन्तर न होना चाहिये। उप-प्रधान की स्थिति वही है जो कि प्रधान की है। हां, उनके कार्यों को अवश्य बांट दिया गया है और उसमें अन्तर कर दिया गया है। किन्तु कम या बेशी दोनों एक-सा ही पद धारण करते हैं अत: उनके निर्वाचन-पद्धति में कोई अन्तर न होना चाहिये।

दूसरी बात मैं यह कहता हूं कि प्रधान का निर्वाचन तो करेंगे संसद् के दोनों आगार तथा राज्यों के विधान-मण्डलों के सदस्यगण। अगर हम उप-प्रधान को भी इसी तरह नहीं चुनते हैं तो इसका मतलब यह हुआ कि राज्यों के विधान-मण्डलों को उप-प्रधान को चुनने का जो हक है उससे उन्हें हम वंचित करते हैं। ऐसा करना, राज्यों के विधान-मण्डलों के सदस्यों के प्रति अन्याय होगा। इसलिये मैंने संशोधन में यह सुझाव दिया है कि उप-प्रधान का निर्वाचन भी उसी रूप में होना चाहिये जैसे कि प्रधान का होगा।

(संशोधन नं० 1216 और 1217 पेश नहीं किये गये।)

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमद:** उपाध्यक्ष महोदय, मैं यह प्रस्ताव रखता हूं कि:

> "अनुच्छेद 55 के खण्ड (1) में 'assembled at a joint meeting' (संयुक्त अधिवेशन में एकत्रित) शब्द हटा दिये जायें और इस संशोधित अनुच्छेद की क्रम संख्या 55 कर दी जाये।"

मेरा अपना ख्याल यह है, श्रीमान्, कि जिन शब्दों को मैं हटाना चाहता हूं उनके कारण कुछ असामंजस्य उत्पन्न होता है। "संयुक्त अधिवेशन में एकत्रित संसद् के उभय आगारों के सदस्यों द्वारा.....उप-प्रधान का निर्वाचन होगा," यह प्रावधान में कहा गया है। मेरा कहना यह है, श्रीमान्, कि उप-प्रधान के निर्वाचन के लिए संसद् के दोनों आगारों के सदस्यों का मत अवश्य ही लिया जाना चाहिये, किन्तु इसके लिये संयुक्त अधिवेशन में एकत्रित होने की कोई जरूरत नहीं है। इसके लिये न तो बैठक करने की जरूरत है और न सदस्यों के एकत्रित होने की ही। विभिन्न समितियों के सदस्य जिस पद्धति से निर्वाचन करते हैं उससे हम सब पूर्णतया परिचित हैं। इसके लिये वे किसी बैठक में समवेत् नहीं होते। सभा की अध्यक्षता चाहे अध्यक्ष या उपाध्यक्ष करे या प्रधान या उप-प्रधान करे—जैसी भी दशा हो—किन्तु सदस्यों के लिये जरूरी नहीं है कि नियमत: वे उपस्थित ही हों। एक समय पर उनका उपस्थित होना जरूरी भी नहीं है और यही आशा की जा सकती है कि वे एक समय पर समवेत् होंगे। इसके लिये न तो संयुक्त बैठक होती है और न अन्य किसी प्रकार की बैठक होती है। कोई कोरम (गणपूरक) भी इसके लिये जरूरी नहीं है। सदस्यगण निश्चित अवधि के अन्दर एक निश्चित स्थान पर पहुंच जाते हैं और निर्वाचन-प्राधिकारी, उसे आप रिटर्निंग आफ़ीसर कहें या पोलिंग आफ़ीसर कहें, उनका मत दर्ज कर लेता है। इसके लिये यदि केवल एक ही सदस्य आता है तो उतना ही पर्याप्त है। इसके लिये यह जरूरी नहीं होता कि कोई बैठक हो और वहां सभी सदस्य एकत्रित हों। मतदान के सम्बन्ध में यह बात लागू ही नहीं हो सकती कि उसके लिये कोई बैठक की जाये या संयुक्त अधिवेशन बुलाया जाये। इसी कारण से मैं सभा से अनुरोध कर रहा हूं कि 'संयुक्त अधिवेशन में एकत्रित' शब्दों को वह हटा दें। इन शब्दों के हटा देने पर खण्ड का रूप यह होगा:

"The Vice-President shall be elected by the members of

[श्री नजीरुद्दीन अहमद]

both Houses of Parliament.....by means of single transferable vote."

(संसद् के उभय आगारों के सदस्यों द्वारा, एकल संक्राम्य मतपद्धति के अनुसार उप-प्रधान का निर्वाचन होगा।)

इसके लिये सदस्यों को एकत्रित होने की कोई जरूरत ही नहीं है। यदि एकत्रित होने की बात रखी गई तो इससे विभिन्न प्रतिबन्ध खड़े हो जायेंगे और कार्य-प्रणाली या जाप्ते के नियमों में बड़ा वितण्डावाद आ जायेगा, जिनकी मतदान के संबंध में कोई आवश्यकता नहीं होती। मैं कहूंगा कि ये शब्द अनावश्यक हैं, इनसे भ्रम पैदा होता है और इनको हटा ही देना चाहिये। संशोधन का दूसरा भाग इस आशय का है कि उस अनुच्छेद को एक पृथक् अनुच्छेद के रूप में रखा जाय। संशोधन के प्रथम अंश पर सभा को गम्भीरतापूर्वक विचार करना चाहिये।

***उपाध्यक्षः** संशोधन नं० 1220 बेगम ऐज़ाज रसूल तथा मि. नजीरुद्दीन अहमद के नाम में है। बेगम साहिबा यहां उपस्थित नहीं है इसलिए मि. नज़ीरुद्दीन अहमद, आप इसे पेश कर सकते हैं।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमदः** मैं यह प्रस्ताव रखता हूं किः

"अनुच्छेद 55 के खण्ड (1) से 'in accordance with the system of proportional representation' (अनुपाती प्रतिनिधान की प्रणाली के अनुसार) शब्द हटा दिये जायें।"

इस मसले पर, कि जब एक ही स्थान की पूर्ति करनी हो तो अनुपाती प्रतिनिधान की व्यवस्था लागू हो सकती है या नहीं, सभा ने बहुत विचार किया है। उस एक स्थान के लिए उम्मीदवार कई हो सकते हैं इसलिए मतों का हस्तान्तरण तो किया जा सकता है। मत-हस्तान्तरण की व्यवस्था से आप ऐसे व्यक्ति को चुन सकेंगे जो अभ्यर्थियों में सर्वाधिक प्रिय हो। उदाहरण देकर मैं इस बात का खुलासा कर देता हूं। मान लीजिये कि एक सौ मतदाता हैं और दस

स्थानों की पूर्ति करनी है। ऐसी सूरत में एक वर्ग या दल का प्रतिनिधान करने वाले दस सदस्य मिलकर अपना एक व्यक्ति चुन सकते हैं और उनके द्वारा चुना हुआ व्यक्ति मतदाताओं के दशमांश का प्रतिनिधान करने वाला समझा जायेगा। यही हुई अनुपाती प्रतिनिधान की पद्धति। इस बात की ओर मैं डॉ. अम्बेडकर का ध्यान आकृष्ट करना चाहता हूं। मैं यह देखता हूं कि अक्सर वह मेरी बात को पकड़ नहीं पाते हैं और उसका जवाब देना भूल जाते हैं। खास तौर पर एक बात की ओर मैं उनका ध्यान आकृष्ट करना चाहता हूं और वह बात यह है। अगर एक सौ मतदाता हैं और दस जगह हैं तो दस मतदाता अपना एक दल बनाकर अपने एक व्यक्ति को चुन सकते हैं और दसों द्वारा चुना हुआ व्यक्ति, अनुपाती प्रतिनिधान की पद्धति के अनुसार, उन दसों सदस्यों का प्रतिनिधान करने वाला माना जायेगा। वह मतदाताओं के दशमांश का प्रतिनिधान करता है। जहां जगहें अनेक हों वहीं अनुपाती प्रतिनिधान की पद्धति लागू हो सकती है। किन्तु जब एक ही व्यक्ति को चुनना है, उस दशा में अनुपाती प्रतिनिधान की पद्धति लागू ही नहीं हो सकती। एक व्यक्ति अपने को अनेक अंशों में विभक्त करके मतदाताओं के अंशों का पृथक्-पृथक् प्रतिनिधित्व करे, ऐसा तो हो नहीं सकता। उदाहरण के लिए, श्रीमान्, आपको सभा ने चुना है पर आपके लिए यह नहीं कहा जा सकता कि आप निर्वाचकों के भिन्न-भिन्न दलों का अनुपाती प्रतिनिधान करते हैं। जब एक ही स्थान की पूर्ति करनी हो तो उस जगह अनुपाती प्रतिनिधान की पद्धति नहीं लागू की जा सकती।

मतों के हस्तान्तरण की जो बात है वह वस्तुतः एक ऐसा मन्तव्य है जो माना जा सकता है। अगर पहली बार की मतगणना में प्रथम आये व्यक्ति को आये वोटों में से आधे से कम वोट उसे प्राप्त होते हैं तो दूसरी बार की मतगणना में हस्तान्तरित मतों को फिर से ठीक-ठीक हिसाब से उम्मीदवारों के नाम में दिखाया जायेगा और इसमें ऐसा हो सकता है कि पहली बार की मतगणना में जो व्यक्ति प्रथम आया हो वह दूसरी बार की मतगणना में प्रथम न आये। इस प्रकार हस्तान्तरित मत-पद्धति में वही व्यक्ति या लोग निर्वाचन में सफल होते हैं जिनको सर्वाधिक समर्थन प्राप्त होता है। अगर जगह एक ही हो तो उसके लिए

[श्री नजीरूद्दीन अहमद]

भी हस्तान्तरित मत की व्यवस्था ही वांछनीय है, किन्तु वहां आनुपातिक प्रतिनिधान नहीं हो सकता। कहने का मतलब यह है कि जब एक व्यक्ति को चुनना है तो वह अकेला निर्वाचकों के भिन्न-भिन्न दलों का आनुपातिक रूप से प्रतिनिधान नहीं कर सकता। हस्तान्तरित मत-पद्धति बरती जाने पर, आनुपातिक प्रतिनिधान की व्यवस्था अनिवार्य रूप से उसी हालत में लागू होगी जब कि जगहें एक से ज्यादा हों। किन्तु जब जगह एक ही हो या यों कहिए कि जब एक ही आदमी चुना जाता है तो वह अकेला किसी वर्ग का आनुपातिक प्रतिनिधान नहीं कर सकता। एक स्थान के लिए, आनुपातिक प्रतिनिधान की व्यवस्था लागू ही नहीं हो सकती। मेरा ख्याल है, श्रीमान्, कि इस आनुपातिक प्रतिनिधान के सम्बन्ध में बड़ी गड़बड़ी या अस्पष्टता पैदा हो गई है। मैं चाहता हूं कि आनुपातिक प्रतिनिधान की पद्धति तथा हस्तान्तरित मतपद्धति के बीच जो अन्तर है उसे स्पष्ट कर दिया जाये। इन दोनों को अलग-अलग रखना चाहिए अन्यथा इस बात की आशंका है कि लोग उन दोनों को एक-दूसरे का अंग समझेंगे।

(संशोधन नं० 1221 और 1222 पेश नहीं किये गये।)

***उपाध्यक्षः** संशोधन नं० 1223 को पेश करने की अनुमति नहीं दी जाती है क्योंकि यह केवल शाब्दिक है।

संशोधन नं० 1224। डॉ. अम्बेडकर, आप इसे अब पेश कीजिये।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** मैं यह प्रस्ताव रखता हूं, श्रीमान्, कि:

"अनुच्छेद 55 के खण्ड (2) में 'either of Parliament or' (किसी संसद् का या) शब्दों की जगह 'of either House of Parliament or of a House' (संसद् के किसी आगार का या.....के आगार) तथा 'member of Parliament or' शब्दों की जगह 'member of either House of Parliament or of a House' (संसद् के किसी आगार अथवा.....के आगार का सदस्य) शब्द और 'in Parliament or such Legislature, as the case may be' (संसद् का अथवा उस विधान-मण्डल का, जैसी कि स्थिति हो)

शब्दों की जगह 'in that House' (उस आगार का) शब्द रखे जायें।"

केवल भाषा संबंधी सुधार की दृष्टि से ही यह संशोधन रखा जा रहा है और इसमें सार की कोई खास बात नहीं है।

(संशोधन नं० 1225, 1226 और 1227 नहीं पेश किये गये।)

***उपाध्यक्ष:** संशोधन नं० 1228 और 1229 समान आशय के हैं।

(संशोधन नं० 1228, 1229 तथा 1230 पेश नहीं किये गये।)

संशोधन नं० 1231, जो कि प्रो. के.टी. शाह के नाम से है, पेश किया जा सकता है।

***प्रोफेसर के.टी. शाह:** उपाध्यक्ष महोदय, मेरा यह प्रस्ताव है कि:

"अनुच्छेद 55 के खण्ड (3) के उपखण्ड (ग) में 'Council of States' (राज्य-परिषद्.....न रखता हो) शब्दों के बाद निम्नलिखित अंश जोड़ दिया जाये:

'and is not disqualified by reason of any conviction for treason, or any offence against the safety, security or integrity of the State, or any violation of the Constitution, or has been elected and served more than once as President or Vice-President of the Union.' "

(और साथ ही यदि वह राज्यद्रोह का अपराधी प्रमाणित होने के कारण, अथवा राज्य की रक्षा, सुरक्षा तथा अखण्डता के विरुद्ध कोई अपराध करने के कारण, अथवा विधान का उल्लंघन करने के कारण निर्योग्य न ठहरा दिया गया हो अथवा एकाधिक बार संघ का प्रधान या उप-प्रधान न चुना जा चुका हो और उस पद पर काम न कर चुका हो।)

[प्रोफेसर के.टी. शाह]

अन्त में एकाधिक बार चुने जाने आदि की जो निर्योग्यता रखी गई है वह अनुच्छेद 46 के संबंध में किये गये निर्णय को देखते हुए उचित नहीं प्रतीत होती है। पर उसके पूर्व की जो निर्योग्यताएं मैंने सुझाई हैं वह तो सभा को मान्य होनी ही चाहिएं।

उपाध्यक्ष महोदय, एक ऐसी विचारधारा आज वर्तमान है जो सम्भवत: यह समझती है कि कुछ खास-खास पदों के अभ्यर्थियों की निर्योग्यताओं का विधान में उल्लेख करना विधान की प्रतिष्ठा के प्रतिकूल है—मैं इस विचार से सहमत नहीं हूं। ये राजनीतिक पद हैं और इनके लिए जिन निर्योग्यताओं का मैंने उल्लेख किया है, उनको रखा जाये या नहीं, इस संबंध में लोग अपना अलग-अलग विचार रखते हैं। अगर आप विधान में इनका स्पष्ट उल्लेख नहीं कर देते हैं तो आपको ऐसे लोग मिलेंगे, जिनके संबंध में विधान भंग करने का सन्देह किया जाता है या जिन पर विधानोल्लंघन का दोषारोपण किया गया है, या यहां तक कि नियमानुसार जो राजद्रोह के अपराधी घोषित हो चुके हैं, फिर भी वह इन पदों के लिए अभ्यर्थी के रूप में खड़े होने का न केवल साहस ही करेंगे (जिसके संबंध में डॉ. अम्बेडकर का ख्याल है कि वे नहीं करेंगे) बल्कि मैं तो कहता हूं कि इसका दुस्साहस भी करेंगे। विधान का उल्लंघन करने पर भी राजद्रोह का अपराधी कोई हो सकता है। मैं आपको बता दूं, राजद्रोह अगर सफल हो जाता है तो फिर राजद्रोह के नाम से उसका उल्लेख नहीं किया जायेगा; क्योंकि उस हालत में कोई भी उसे राजद्रोह कहने की हिम्मत नहीं करेगा। इस दृष्टि से मैं इसे आवश्यक समझता हूं कि विधान में एक ऐसा प्रावधान होना ही चाहिये जिस में तीन-चार बातों के आधार पर, जिसका मैंने अभी उल्लेख किया है, निर्योग्यता लागू की गई हो। विधान का उल्लंघन या राजद्रोह के लिए अपराधी घोषित होना ऐसी बातें हैं कि राजनीतिक अपराधों या राजनीतिक पदों के संबंध में निश्चित रूप से हम यह नहीं मान सकते हैं कि इन अपराधों के दोषी निर्वाचन के लिये खड़े ही न होंगे।

इसलिए नि:शंक होकर हम यह नहीं मान सकते कि अगर ऐसे दोषी व्यक्ति

निर्योग्यताओं की उपेक्षा करके ऐसे पदों के लिए खड़े होने का साहस या दुस्साहस करें तो निर्वाचक अवश्य ही इतनी साधारण बुद्धि वाले और औचित्य का ख्याल करने वाले होंगे कि वे इनको चुनेंगे ही नहीं। विधान में जिस तंग पैमाने पर मताधिकार दिया गया है उसे ध्यान में रख कर, मुझे यह भरोसा नहीं है कि विधान में उस निर्योग्यता का उल्लेख न हो, पर यह बात संभव न होगी कि पार्टी के प्रभाव में आकर या तरफदारी के फेर में पड़कर निर्वाचक इन निर्योग्यताओं की उपेक्षा करें। इसलिए मैं सभा से सिफ़ारिश करता हूं कि वह इस संशोधन को स्वीकार कर ले।

***उपाध्यक्ष:** आगे के दो संशोधनों को अर्थात् नं० 1232 तथा 1233 को पेश करने की अनुमति नहीं दी जाती है क्योंकि ये केवल शाब्दिक हैं।

संशोधन नं० 1235 और 1239 जो मि. नज़ीरुद्दीन अहमद के नाम में हैं तथा संशोधन नं० 1234 जो डॉ. अम्बेडकर के नाम से है—ये दोनों—समान आशय के हैं। इनमें से डॉ. अम्बेडकर का संशोधन मुझे अधिक व्यापक दिखाई देता है। डॉ. अम्बेडकर अब इसे पेश करें।

***माननीय डॉ. बी. आर. अम्बेडकर:** मैं यह प्रस्ताव रखता हूं, श्रीमान्, कि:

> "अनुच्छेद 55 के खण्ड (4) में जहां कहीं भी 'or position of emolument' (परिलाभ के पद) शब्द आये हों उनकी जगह 'of profit' (लाभ के) शब्द रखे जायें।"

***उपाध्यक्ष:** क्या मि. नज़ीरुद्दीन अहमद अपने संशोधन नं० 1235 के संबंध में यह चाहते हैं कि उस पर राय ली जाये?

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमद:** नहीं, श्रीमान्, वह डॉ. अम्बेडकर के संशोधन में आ जायेगा।

***उपाध्यक्ष:** संशोधन नं० 1239 के संबंध में आप क्या कहते हैं?

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमद:** यही बात उसके संबंध में भी लागू होगी।

(संशोधन नं० 1236 पेश नहीं हुआ।)

***उपाध्यक्ष:** संशोधन नं० 1237 तथा 1238 शाब्दिक मात्र हैं, अत: उनको उपस्थित करने की अनुमति नहीं दी जाती है।

[उपाध्यक्ष]

संशोधन नं० 1240 डॉ. अम्बेडकर के नाम में है। वे इसे पेश कर सकते हैं।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर:** मेरा यह प्रस्ताव है, श्रीमान्, कि:

"अनुच्छेद 55 के खण्ड (4) के व्याख्या संबंधी उपखण्ड (क) की जगह निम्नलिखित अंश रखा जाये:

'(a) he is the Governor of any State for the time being specified in Part I of the First Schedule or is a minister either for India or for any such State, of.' "

[(क) वह प्रथम अनुसूची के भाग 1 में तत्समय उल्लिखित किसी राज्य का प्रमुख है अथवा भारत का या ऐसे किसी राज्य का मंत्री है।]

इस प्रश्न पर गत बैठक में बहस हो चुकी है।

(संशोधन नं० 1241 पेश नहीं किया गया।)

***उपाध्यक्ष:** संशोधन नं० 1242, 1243 तथा 1244 केवल शाब्दिक हैं अत: इनको उपस्थित करने की अनुमति नहीं दी जाती है।

संशोधन नं० 1245 प्रो. के.टी. शाह के नाम में है। मैं नहीं समझता कि इसे पेश करने में कोई फ़ायदा है।

***प्रोफेसर के.टी. शाह:** बहुत अच्छा, श्रीमान्।

***उपाध्यक्ष:** संशोधन नं० 1246, 1247 तथा 1248 केवल शाब्दिक हैं अत: उनको पेश करने की अनुमति नहीं देता हूं।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमद:** वे 'केवल शाब्दिक' नहीं हैं, हां, शाब्दिक जरूर हैं।

***उपाध्यक्ष:** इस संबंध में मैं आपसे सहमत नहीं हूं।

(संशोधन नं० 1249 तथा 1250 पेश नहीं किये गये।)

***उपाध्यक्ष:** संशोधन नं० 1251 जो प्रो. के.टी. शाह के नाम में हैं उसके पेश होने में भी रुकावट पड़ गई है। संशोधन नं० 1252, 1253, 1254 तथा

1255 मेरी समझ से केवल शाब्दिक हैं, अतः इन्हें पेश करने की अनुमति नहीं दे सकता हूं।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमदः** संशोधन नं० 1255 तो शाब्दिक नहीं है।

***उपाध्यक्षः** अगर यह शाब्दिक नहीं है तो महज रस्मी है।

***श्री नज़ीरुद्दीन अहमदः** खैर, जब आपने इसे अस्वीकृत ही कर दिया तो फिर पूछना व्यर्थ है कि क्यों अस्वीकृत किया है।

(संशोधन नं० 1256 और 1257 पेश नहीं किये गये।)

***उपाध्यक्षः** अब कोई संशोधन नहीं रह गया। अनुच्छेद पर अब विस्तृत रूप से वाद-विवाद किया जा सकता है।

***श्री तजम्मुल हुसैनः** अभी दस मिनट का समय है और इतने में ही मैं अपनी बात कह दूंगा। उपाध्यक्ष महोदय, संशोधन नं० 1215 को ही मैं पहले लेता हूं। जिसे हमारे माननीय मित्र मि. मोहम्मद ताहिर ने पेश किया है। उनके संशोधन में यह कहा गया है कि उप-प्रधान उसी प्रकार से निर्वाचित किया जायेगा जैसा कि अनुच्छेद 43 में प्रावहित है। अनुच्छेद 43 में प्रधान के निर्वाचन की व्यवस्था बताई गई है। वह कैसे चुना जायेगा? उसका निर्वाचन करेंगे, संसद् के दोनों आगारों के निर्वाचित सदस्यगण तथा दो आगार वाले राज्यों के विधान-मण्डल के दोनों आगारों के निर्वाचित सदस्यवृन्द। किन्तु अनुच्छेद 55 के अनुसार, जिस पर कि अभी हम विचार कर रहे हैं, वह इस प्रकार नहीं चुना जायेगा, बल्कि इस अनुच्छेद के अनुसार तो उसका निर्वाचन होगा केन्द्रीय विधान-मण्डल के दोनों आगारों की संयुक्त सभा में और उसको चुनने वाले होंगे उक्त दोनों आगारों के सदस्यगण। मैं इस संशोधन का विरोध करता हूं क्योंकि प्रधान तथा उप-प्रधान में अन्तर है। उप-प्रधान को तो राज्य-परिषद् की बैठकों में उसका सभापतित्व करना होगा। किन्तु भारतीय गणतंत्र के प्रधान को, विधान-मण्डल की बैठकों की अध्यक्षता से कोई संबंध नहीं है। उप-प्रधान को भी इससे कोई संबंध नहीं है जब तक कि मृत्यु आदि कारण से प्रधान का पद रिक्त होने पर वह उसकी जगह न आ जाये। इसलिए अनुच्छेद 35, जिस रूप में विधान में रखा गया है, वह मेरी राय से सर्वथा समुचित है। दूसरा संशोधन आता है नं० 1219 का, जिसे पेश किया है मेरे माननीय मित्र नज़ीरुद्दीन अहमद

[श्री तजम्मुल हुसैन]

साहब ने। वह यह चाहते हैं कि अनुच्छेद 55 के खण्ड (1) में “assembled at a joint meeting” (संयुक्त अधिवेशन में एकत्रित) शब्द जो आये हैं उनको हटा दिया जाये। वह यह नहीं चाहते कि उप-प्रधान का निर्वाचन दोनों सदस्यों की संयुक्त बैठक में हो। वह यह भी नहीं बताते हैं कि उसका निर्वाचन कौन सदन करे। इसलिये यह संशोधन अर्थशून्य है और इसको रद्द कर देना चाहिए।

अब मैं संशोधन नं० 1220 को लेता हूं, जो मि. नज़ीरुद्दीन अहमद तथा बेगम ऐज़ाज़ रसूल की ओर से आया है। इसके लिये यह कहा गया है कि अनुच्छेद 55 के खण्ड (1) से “in accordance with the system of proportional representation” (अनुपाती प्रतिनिधान की पद्धति के अनुसार) शब्दों को हटा दिया जाये। प्रधान के चुनाव में हम सर्वथा अनुपाती प्रतिनिधित्व की पद्धति ही बरतने की व्यवस्था कर रहे हैं। मान लीजिए एक से अधिक, तीन या चार उम्मीदवार इस पद के लिए खड़े हो जाते हैं। ऐसी अवस्था में अनुच्छेद में दी हुई पद्धति ही हमारे लिए सर्वथा उपयुक्त है। हर मतगणना में एक अभ्यर्थी छांट दिया जाता है और इस तरह अनुपाती प्रतिनिधान के आधार पर हस्तान्तरित मत-व्यवस्था के हिसाब से किसको कितने मत मिले यह हमें आसानी से मालूम हो जाता है। हमारे जैसे देश के लिए यही पद्धति सर्वोत्तम है। इसलिए मैं इस संशोधन का भी विरोध करता हूं।

अब मैं लेता हूं उस संशोधन को, जिसे पेश किया है मसौदा-समिति के सदर डॉक्टर अम्बेडकर साहब ने। यह संशोधन नं० 1224 का है। मैं इसका भी विरोध करता हूं। इस संबंध में मेरा मन्तव्य यह है। जिस समय अम्बेडकर साहब इसे पेश कर रहे थे उस समय मेरा ध्यान और किसी बात में था अन्यथा उसी समय औचित्य का प्रश्न मैंने उठाया होता। अस्तु, मेरा औचित्य प्रश्न यह है और इसे मैं अब भी उठा सकता हूं। मेरी आपत्ति यह है कि कोई सदस्य एक प्रस्ताव के द्वारा बहुत-सी बातें पेश नहीं कर सकता। हर बात के लिए एक अलग प्रस्ताव

होना चाहिए। उन्होंने तीन या चार बातें एक ही प्रस्ताव के ज़रिये पेश की हैं। प्रस्ताव द्वारा रखी गई सभी बातों को पढ़ने के बाद आपको इसे अनियमित ठहराना ही होगा। यह संशोधन सर्वथा अवैध है। उनका कहना है कि अनुच्छेद 55 के खण्ड (2) में “either of Parliament or” (किसी संसद् का और) शब्दों की जगह “of either House of Parliament or of a House” (संसद् के किसी आगार का या.....के आगार) शब्द रखे जायें तथा “member of Parliament or" शब्दों की जगह “member of either House of Parliament or of a House” (संसद के किसी आगार अथवा... के आगार का सदस्य) शब्द रखे जायें और “in Parliament or such Legislature, as the case may be” (संसद् का अथवा उस विधान-मंडल का, जैसी कि स्थिति हो) शब्दों की जगह “in that House” (उस आगार का) शब्द रखे जायें। ये चार संशोधन एक ही प्रस्ताव द्वारा पेश किये हैं। हो सकता है, कोई एक संशोधन को स्वीकार करता हो पर दूसरे को मंजूर न करता हो। इसलिये मेरा ख्याल है कि आप उनके प्रस्ताव को अनियमित ठहरा दें। यही ठीक होगा।

***उपाध्यक्षः** बदकिस्मती यह है, अब ऐसा नहीं किया जा सकता। आपकी राय जरा देर से आई।

***श्री तजम्मुल हुसैनः** एक बात कह दूं। मेरा ख्याल है कि डॉक्टर अम्बेडकर खुद इस बात से सहमत होंगे कि ऐसे कामों के लिए देर का सवाल ही नहीं उठता।

***माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकरः** कार्यालय इसे ठीक कर सकता था।

***श्री तजम्मुल हुसैनः** मेरा ख्याल है कि डॉ. अम्बेडकर मेरे इस कथन से सहमत होंगे कि विधि संबंधी प्रश्न किसी समय भी उठाया जा सकता है। किसी समय भी आप यह कह सकते हैं कि अमुक बात अनियमित है।

***उपाध्यक्षः** कार्य-पद्धति के संबंध में मेरी जो अजानकारी है, उससे शायद उन्होंने फ़ायदा उठाया है।

***श्री तजम्मुल हुसैनः** मेरी समझ में तो इस बात का कोई कारण नहीं दिखाई देता कि अगर मैं कोई भूल करता हूं तो उसके आधार पर वह भूल बनी

[श्री तजम्मुल हुसैन]

ही क्यों रहने दी जाये। सब कुछ निर्भर करता है आपके फैसले पर उसके बाद मैं लेता हूं संशोधन नं० 1231 को, जिसे मेरे आदरणीय मित्र प्रो. के.टी. शाह ने पेश किया है। उनका कहना है कि अनुच्छेद 55 के खण्ड (3) के उपखण्ड (ग) में "Council of States"(राज्य-परिषद्) शब्दों के बाद इतना जोड़ दिया जाये:

> "and is not disqualified by reason of any conviction for treason, or any offence against the safety, security or integrity of the State, or any violation of the Constitution, or has been elected and served more than once as President or Vice-President of the Union."
>
> (और साथ ही यदि वह राज्यद्रोह का अपराधी प्रमाणित होने के कारण, अथवा राज्य की रक्षा, सुरक्षा तथा अखण्डता के विरुद्ध कोई अपराध करने के कारण, अथवा विधान का उल्लंघन करने के कारण निर्योग्य न ठहरा दिया गया हो, अथवा एकाधिक बार संघ का प्रधान या उप-प्रधान न चुना जा चुका हो और उस पद पर काम न कर चुका हो।)

मेरा ख्याल है कि यह संशोधन बिल्कुल गलत है। मैं यह नहीं समझ पाता कि इस संशोधन को पेश करने की इजाज़त ही क्यों दी गई। सदस्यों की निर्योग्यता के संबंध में, अनुच्छेद 83 में आप देखेंगे कि सभी बातों का उल्लेख किया गया है। इसमें कहा गया है कि कोई व्यक्ति संसद् के किसी सदन का सदस्य चुने जाने के लिए और सदस्य बने रहने के लिए निर्योग्य होगा अगर भारत सरकार के अथवा किसी राज्य की सरकार के अधीन किसी लाभ के पद पर है, अथवा यदि वह विकृत चित्त है और सक्षम न्यायालय की ऐसी घोषणा है, या यदि वह अनुन्मुक्त दिवालिया है, या किसी विदेशी राज्य के प्रति निष्ठा या अनुषक्ति को स्वीकार किये हुए हैं, या किसी विदेशी राज्य का नागरिक या प्रजा है अथवा वहां की नागरिकता के अधिकारों का अधिकारी है और या वह संसद् निर्मित किसी विधि के अधीन निर्योग्य कर दिया गया है। ये सभी बातें उस अनुच्छेद में दी हुई हैं। इसलिए इस अनुच्छेद के अनुसार ऐसा व्यक्ति राज्य-परिषद् का सदस्य हो ही नहीं सकता। अनुच्छेद 55 के खण्ड (3) में तो यह दिया गया है कि राज्य-परिषद् का सदस्य चुने जाने की क्या-क्या योग्यताएं

हैं। इसलिए इन सब बातों को खण्ड (3) में रखना व्यर्थ है। मुझे विश्वास है, डॉ. अम्बेडकर इस बात को कभी न स्वीकार करेंगे और न सभा ही इसे स्वीकार करेगी।

मैंने इस संशोधन को दो हिस्सों में बांट दिया है और पहले हिस्से के संबंध में अपनी बातें कह चुका हूं। अब दूसरे हिस्से पर आता हूं। संशोधन के दूसरे हिस्से में यह कहा गया है कि एक से अधिक बार अगर कोई व्यक्ति प्रधान या उप-प्रधान चुना जा चुका है और उस पद पर काम कर चुका है तो वह इस पद के लिए निर्योग्य समझा जाएगा। मान लीजिए कि कोई व्यक्ति एक से अधिक बार प्रधान या उप-प्रधान के पद पर काम कर चुका है। अगर वह बहुत ही योग्य-व्यक्ति है और जनता उसे चाहती है तथा विधान-मण्डल उसे चाहता है तो उसे क्यों दुबारा उप-प्रधान होने से रोकते हैं? मैंने इस आशय का एक संशोधन भेजा था कि कोई भी व्यक्ति एक से अधिक बार प्रधान चुना जा सकता है। पर चूंकि मैं सभा में समय पर उपस्थित नहीं था इससे मैं उसे पेश नहीं कर सका। किन्तु सभा ने इस बात को स्वीकार कर लिया था कि कोई व्यक्ति एक से अधिक बार प्रधान चुना जा सकता है। फिर उप-प्रधान के लिए यह रोक क्यों लगाई जाये कि एक से अधिक बार कोई इसके लिए नहीं चुना जा सकता?

ठीक डेढ़ बजे हैं, श्रीमान्, और मैं अपनी बात समाप्त करता हूं।

***उपाध्यक्षः** अब सभा कल प्रातः 10 बजे तक के लिए स्थगित होती है।

इसके बाद सभा बुधवार, 29 दिसम्बर सन् 1948 ई. के प्रातः 10 बजे के लिए स्थगित हुई।